यह आज़ादी
झूठी है!
भारतीय परिवार
जनता को वनवास मिला है
गद्दारों को राज मिला है
रोटी महंगी कारें सस्ती
ये कैसा स्वराज मिला है?

भारत की आजादी के लिए लड़ने वाले
समस्त क्रान्तिकारियों को समर्पित

विषय-सूची

यह आज़ादी झूठी क्यों?

आप में से ज्यादातर लोगों को शायद यह शीर्षक रास न आए क्योंकि लगभग सभी लोग मानते हैं की देश तो 15 अगस्त 1947 को आजाद हो गया। कुछ समय पहले तक हम भी यही मान कर जी रहे थे। किन्तु जब हमने गहन शोध और चिन्तन शुरू किया तो कुछ बातें सामने आईं, जो मैं आपके साथ साझा करना चाहता हूँ।

दुनिया में 3 तरह के लोग होते हैं।

1. जो सत्य को सत्ता मानते हैं।

ऐसे श्रेष्ठ लोगों की संख्या दुनिया में बहुत कम है। ऐसे लोग क्योंकि सत्य को सर्वोच्च मानते हैं और उसे पहचानने की क्षमता रखते हैं, अगर दुनिया में उनको नेतृत्व मिले तो विश्व को नई ऊँचाइयों तक ले जाते हैं।

2. जो सत्ता को सत्य मानते हैं।

दुनिया में अधिकतर सामान्य लोग इस श्रेणी में आते हैं। ऐसे लोगों में सत्य को पहचानने की शक्ति नहीं होती है और इसलिए सत्य जानने के लिए सत्ता पर निर्भर रहते हैं अर्थात जो सत्ता कहे उनके लिए वही सत्य होता है।

3. जो भ्रम को सत्य मान लेते हैं।

आधुनिक शिक्षा प्रणाली के आने से इस श्रेणी के लोगों की संख्या में बहुत ज्यादा इजाफा हुआ है। ऐसे लोग बहुत ज्यादा मूर्ख होते हैं परंतु अपने आप को सबसे ज्यादा बुद्धिमान समझते हैं। ये किसी भी सत्य या सबूत को नहीं मानते। सत्य को पहचानना तो दूर की बात, अगर सत्ता भी कह दे तो भी नहीं मानते। दरअसल उनको वहम हो गया होता है और हमारे यहाँ एक कहावत है कि दुनिया में हर बीमारी का इलाज हो सकता है पर वहम का नहीं।

हम जो बात आपके सामने रखने जा रहे हैं अगर आप पहले किस्म के लोगों में से हैं तो आप इस सत्य को समझ जायेंगे और हमारा साथ भी देंगे परन्तु अगर

आप दूसरे किस्म के लोगों में से हैं तो शायद अभी हम पर आपको यकीन ना आये। इसलिए आप स्वयं सरकार से आर.टी.आई. के माध्यम से वो सवाल पूछें जो हमने भी पूछे। आपको यकीन आ जायेगा। उसके बाद आप हमारा साथ देंगे।

और हाँ अगर आप तीसरे प्रकार के लोगों में से हैं तो हमारे पास आपका कोई इलाज नहीं है। आपको भ्रम नामक एक बीमारी हुई है जिसका इलाज आपको खुद से ही खोजना होगा।

और वह सच ये है कि भारत 15 अगस्त 1947 को आजाद नहीं हुआ था और न ही आज तक आजाद हुआ है। इसको समझने के लिए पहले गुलामी क्या होती है इसे समझा जाये।

गुलामी मुख्यतः तीन प्रकार की होती है...

1. राजनैतिक 2. आर्थिक 3. मानसिक

राजनैतिक गुलामी

यह गुलामी वह है जिसमें डण्डे, अर्थात् ताकत के बल पर शासन किया जाता है। भारत में समाज इतना मजबूत था कि देश के भीतर राज्य का हस्तक्षेप न्यूनतम था और राज्य को प्रायः बाहरी सुरक्षा व विदेश नीति तय करने का अधिकार था। इसलिए भारत में लोग कहा करते थे - राजा कोई भी हो, हमें क्या?

भारत में राजनैतिक गुलामी अँग्रेज़ों के आने से शुरु हुई। अँग्रेज़ों ने भारत की सामाजिक व्यवस्थाओं में हस्तक्षेप करना शुरु किया।

भारत 15 अगस्त 1947 को राजनैतिक रूप से आज़ाद हुआ ऐसा बताया जाता है, पर जब हमने सूचना का अधिकार के माध्यम से भारत सरकार से पूछा कि भारत कब और किससे आज़ाद हुआ? तो इसका कोई भी जवाब सरकार ने नहीं दिया।

सेवा में
सूचना अधिकारी
प्रधानमंत्री कार्यालय
नई दिल्ली।

Rs 10/- attached
IPO No. 137283
dated. 6/3/16

विषय:- RTI के तहत सूचना लेने हेतु।

श्रीमान जी,
कृपया निम्नलिखित सूचना प्रदान करें।

① भारत कब आजाद हुआ?
② भारत किससे आजाद हुआ?
③ 14 अगस्त 1947 को देश का शासक कौन था?
④ 16 अगस्त 1947 को देश का शासक कौन था?
⑤ 25 जनवरी 1950 को देश का शासक कौन था?
⑥ 27 जनवरी 1950 को देश का शासक कौन था?
⑦ ब्रिटिश लोग देश के शासक कब बने?
⑧ ब्रिटिश को देश का शासक किसने घोषित किया?
⑨ ब्रिटिश का शासन किस तिथि से भारत में समाप्त हुआ?
⑩ क्या ब्रिटिश या उनकी आने वाली पीढ़ी का आज भारत पर किसी भी तरह का शासनिक या प्रशासनिक अधिकार है? यदि हैं तो कौन-कौन से अधिकार हैं? और किस अधिकार पर हैं?

धन्यवाद

दिनांक 6/3/16

निवेदक,
Deepak Rathee
592 [illegible] Prem Nagar
Behind Police Line
Rohtak-124001

आर.टी.आई की नकल

हमारे प्रश्न निम्नलिखित थेः-

(1) भारत कब आजाद हुआ?

(2) भारत किससे आजाद हुआ?

(3) 14 अगस्त 1947 को देश का शासक कौन था?

(4) 16 अगस्त 1947 को देश का शासक कौन था?

(5) 25 जनवरी 1950 को देश का शासक कौन था?

(6) 27 जनवरी 1950 को देश का शासक कौन था?

(7) ब्रिटिश लोग देश के शासक कब बने?

(8) ब्रिटिश को देश का शासक किसने घोषित किया?

(9) ब्रिटिश का शासन किस तिथि से भारत में समाप्त हुआ?

(10) क्या ब्रिटिश या उनकी आने वाली पीढ़ी का आज भारत पर किसी भी तरह का शासनिक या प्रशासनिक अधिकार है? यदि हाँ तो कौन-कौन से अधिकार हैं? और किस अधिकार पर हैं?

सरकार ने जवाब इसलिए नहीं दिया क्योंकि 16 अगस्त 1947 को और उसके बाद भी भारत का शासक दरअसल ब्रिटेन का राजा जार्ज षष्टम ही था। इस झूठी आज़ादी (1947) के बाद भारत के गवर्नर जनरल बने राजगोपालाचारी ने ब्रिटेन के राजा जार्ज षष्टम के सेवक के रूप में ही शपथ ली थी।

माउंट बैटन के साथ सी. राजगोपालाचारी

भारत के प्रथम गवर्नर जनरल चक्रवर्ती राजगोपालाचारी की 21 जून 1948 को ली गई शपथ

मैं चक्रवर्ती राजगोपालाचारी गम्भीरता के साथ इस बात को पक्का करता हूँ कि मैं हिज मेजेस्टी किंग जार्ज षष्टम, उनके उत्तराधिकारियों के प्रति विधि के अनुसार वफादार, निष्ठावान रहूँगा और उनके प्रति पूर्ण भक्ति रखूंगा। और मैं चक्रवर्ती राजगोपालाचारी इस बात को गम्भीरता के साथ पक्का करता हूँ कि मैं गर्वनर जनरल के पद पर हिज मेजेस्टी किंग जार्ज षष्टम एवम् उनके उत्तराधिकारियों की ठीक प्रकार से सत्यता के साथ सेवा करुंगा।

ठीक इसी तरह की शपथ जार्ज षष्टम की सेवा के लिए भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने भी ली थी। भारत अगर 15 अगस्त को आजाद हो गया था तो ब्रिटेन के राजा की शपथ लेने की क्या मजबूरी थी?

हकीकत यह है कि 15 अगस्त 1947 को भारत में सिर्फ सत्ता हस्तान्तरित हुई थी, 99 साल की लीज़ पर! सच तो यह है कि आज भी ब्रिटेन की रानी भारत की शासक है।

क्या आप जानते हैं कि आज भी ब्रिटेन की रानी को भारत आने के लिए वीज़ा की ज़रूरत नहीं होती है। जबकि भारत के राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री को ब्रिटेन जाने के लिए वीजा चाहिए।

दिल्ली के बुराड़ी "कोरोनेशन पार्क" में लगी जार्ज पंचम की मूर्ति

यदि आप दिल्ली जाएँ तो देखेंगे कि हज़ारों करोड़ रुपए खर्च करके भारत सरकार एक पार्क का निर्माण कर रही है। यह पार्क उसी स्थान पर बन रहा है जहाँ सन् 1911 में राजा जार्ज पंचम का राज्याभिषेक हुआ और दिल्ली भारत की राजधानी बनी। वह भूमि जिस पर पार्क बन रहा है, आज भी ब्रिटेन की रानी के अधिकारक्षेत्र में है। इस पार्क का नाम "कोरोनेशन पार्क" है, जिसमें अँग्रेज़ शासकों की मूर्तियाँ लगाई गई हैं।

यदि आपने दिल्ली स्थित राष्ट्रपति भवन देखा है तो उसके सामने एक खम्भा लगा देखा होगा जिस पर ब्रिटेन के राजमुकुट से लिया गया सितारे का निशान है। भारत सरकार इस निशान को 99 साल तक हटा नहीं सकती।

ब्रिटेन की रानी के मुकुट और छड़ी पर लगा सितारे के निशान।
राष्ट्रपति भवन के सामने लगे स्तंभ पर लगा सितारे का वही निशान भारत में ब्रिटिश साम्राज्य का प्रतीक है।

कुछ लोग कहते हैं कि भारत 26 जनवरी 1950 को आजाद हुआ था। तो सवाल यह है कि वर्ष 1953 में हम भारत के लोग ब्रिटिश प्रजा कैसे हो सकते हैं।

यह रहा इसका सबूत

No.F. 21-69/51-UK
Government of India,
Ministry of External Affairs.

New Delhi, the 10th November, 1953.

To

Shri Ram Narayan,
Rohtas Printing Press,
Rohtak.

Subject:- Status of Indian citizens under British Nationality Act, 1948.

Dear Sir,

With reference to your letter dated the 5th September, 1953, on the above subject, I an Directed to say that under Section (1) of the British Nationality Act of 1948, a citizen of India is also a British subject for the purposes of British law. This position has remained unchanged even after India became a Republic.

Yours Faithfully,

for Under Secretary
K. P. Menon

अँग्रेज़ों द्वारा भारत का शोषण और लूट करने के लिए बनाई गई शासन व्यवस्था आज भी चल रही है। हिंसा व शोषण पर आधारित यह शासन व्यवस्था टिकाए रखने के लिए बनाए गए तमाम कानून अब भी लागू हैं। अगर यह झूठ है तो सरकार लिखित में दे कि 15 अगस्त 1947 को भारत से ब्रिटेन के तमाम अधिकार समाप्त हुए थे और भारत की जनता अपने राष्ट्र की सर्वोच्च शासक है। अन्यथा 15 अगस्त को देश का प्रधानमंत्री लाल किले पर झण्डा फहराने का नाटक बन्द करें।

इस विषय में हम अगले अंकों पर विस्तार से चर्चा करेंगें।

आर्थिक गुलामी

आर्थिक गुलामी वह है जिसमें मनुष्य की जीने की स्वतंत्रता और स्वावलम्बी आर्थिक व्यवस्थाओं को तोड़ दिया जाता है। सामान्य व्यक्ति को समझ में न आने वाले ऐसे तंत्र में फँसा लिया जाता है जहाँ वह अर्थ की आवश्यकता के लिए दूसरों की गुलामी करने पर मजबूर हो जाता है। वह इस गुलामी में दुखी तो रहता है, पर इस गुलामी के तंत्र को समझ नहीं पाता।

भारत में आर्थिक गुलामी भी अँग्रेज़ों के आने से शुरु हुई। सन् 1700 के आसपास भारत की अर्थव्यवस्था दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था थी, किन्तु हमें मात्र इस बात पर गर्व नहीं है। जैसे आज अमेरिका को सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था माना जाता है और तमाम अमेरिकी लोग इस पर गर्व करते हैं। लेकिन हम अमेरिका को आदर्श नहीं मानते क्योंकि जिस वक्त भारत की अर्थव्यवस्था समृद्ध और स्वावलम्बी थी, वह सत्य और अहिंसा पर टिकी थी और आज की अमेरिकी अर्थव्यवस्था हिंसा और शोषण पर खड़ी है। भारत मे हमारे पूर्वजों ने प्रत्येक व्यक्ति के आहार और सम्मान की सुरक्षा की थी, जिससे व्यक्ति की आर्थिक स्वतंत्रता सुनिश्चित हो; उसे किसी की गुलामी न करनी पड़े। हमे इस बात पर ज्यादा गर्व होना चाहिए ।

अँग्रेज़ों ने शुरूआत में कपड़ा मिलें लगाईं, लेकिन उनमें काम करने के लिए उन्हें मज़दूर नहीं मिले। भारत में लोग स्वतंत्र और स्वावलम्बी थे। अँग्रेज़ों ने विकास के नाम पर वाराणसी में गंगा नदी पर एक पुल बनवाया। पुल बनने से पहले वहाँ नदी पार कराने के लिए 4,000 नावें थीं, जिन पर 8,000 नाविक परिवार आश्रित थे। पुल बनने के बाद नाविक बेरोज़गार हुए और वे सूरत के कारखानों में गुलामी करने को मजबूर हो गए।

फिर अँग्रेज़ों ने तरह-तरह के उपायों से कारीगरी और उद्योगों पर आधारित भारत की स्वावलम्बी अर्थव्यवस्था को तोड़ने की कोशिशें की, जैसे स्वयं के माल को कर मुक्त करना और भारतीय उत्पादों पर ज्यादा कर लगाना, कारीगरों को कच्चा माल नहीं लेने देना आदि। इस तरह अँग्रेज़ों ने स्वतंत्र और स्वावलम्बी व्यवस्था तोड़कर भारत को आर्थिक गुलामी में ढ़केल दिया। आज भी भारत के काले अँग्रेज़ भी विकास के नाम पर भारत का विनाश करने पर तुले हैं। कोई भी राजनीतिक दल हो, भारत का ऐसा विनाशकारी विकास ही चाहता है।

इस आर्थिक गुलामी के मूल में बैंकिग व्यवस्था है जिसे ''बैंकों का मायाजाल'' पुस्तक में समझाया गया है और आगे भी लेखों और पुस्तकों के माध्यम से इस षड्यंत्रकारी व्यवस्था का पर्दाफाश करने के लिए हम लोगों को जागृत करते रहेंगे।
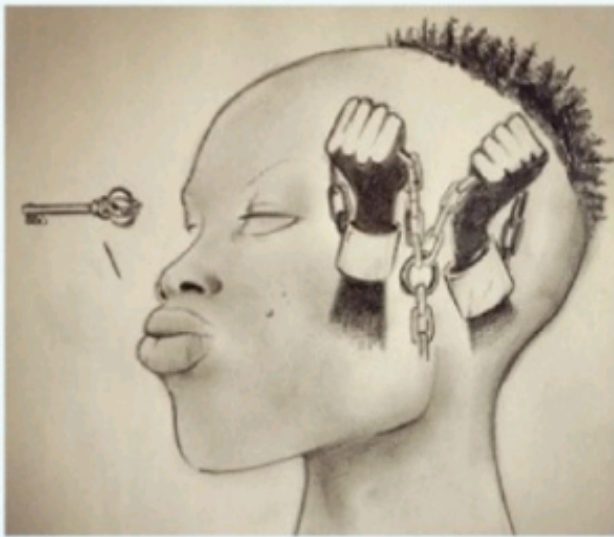
मानसिक गुलामी

गुलामी के इस तीसरे तरीके में न तो डण्डे के बल पर गुलाम बनाया जाता है और न ही किसी तंत्र की आवश्यकता होती है। बल्कि आप खुद इस गुलामी को चुन लेते हैं। तीनों गुलामियों में मानसिक गुलामी सबसे खतरनाक है। मानसिक रूप से गुलाम होने के बाद मनुष्य आज़ादी का स्वप्न ही त्याग देता है और गुलामी से लड़ना बन्द कर देता है क्योंकि उसको आज़ादी का भ्रम हो जाता है।

समाज को मानसिक रूप से गुलाम किए बिना राजनैतिक और आर्थिक गुलामी को लम्बे समय तक कायम रखना सम्भव नहीं है। अँग्रेज़ों ने भारत आकर शिक्षा व्यवस्था, प्रचार तंत्र, आधुनिक विज्ञान आदि के माध्यम से हमें यह समझा दिया कि हमारे पूर्वज मूर्ख थे और अगर हमें सही रास्ते पर चलना है तो अँग्रेज़ों द्वारा दी गई जीवन शैली को अपनाते हुए आगे बढ़ना चाहिए। आज के अधिकांश नौजवान पढ़-लिखकर अपने पूर्वजों को मूर्ख और अमेरिका को अपना आदर्श मानते हैं और भारत को भी अमेरिका बना देना चाहते हैं।

इन गुलामियों के कारण समाज और परिवार इस हद तक टूट चुका है कि प्रत्येक व्यक्ति भय के माहौल में जीने को बाध्य है। समाज में आज रोज़गार, न्याय, प्रेम, सम्मान आदि की व्यवस्था समाप्त हो गयी है और समाज में ईर्ष्या, लूट, हत्या, शोषण व्याप्त है और ऐसी स्थिति में इन्सान आत्महत्या तक करने को तैयार है।

अपने ही देश में यदि हम असुरक्षित और भयभीत हैं तो फिर ये कैसी आज़ादी? इसलिए हम कहते हैं कि यह आज़ादी झूठी है!

जिन अंग्रेजों को भगाने के लिए, लाखों क्रांतिकारियों ने शहादतें दी, जिस एक सपने के लिए उन्होंने अपना सब कुछ न्योछावर कर दिया, आज वह पूछ रहे होंगे कि आखिरकार भारत कब आज़ाद होगा। उनका सपना कब पूरा होगा।

जिस देश की आज़ादी के लिए नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने लोगों से खून माँगा तो लोगों ने जोश और जज्बे के साथ अपना तन- मन- धन सब कुछ दे दिया। क्या आपके खून में आज भी वही उबाल है? भारत के एक क्रान्तिकारी सोहनलाल को फाँसी होनी थी तब उनके पास एक प्रस्ताव आया कि यदि वह ब्रिटेन की रानी से माफ़ी मांग ले तो उसको फांसी नहीं होगी। इस पर सोहनलाल ने कहा कि गलती अंग्रेजों ने की है जो हमारे देश में आए, माफ़ी वो माँगे और सोहनलाल को फाँसी हो गई। क्या भारतीयों में आज भी सोहनलाल जैसा स्वाभिमान जिन्दा है? भारत की आज़ादी के लिए सौ जन्म भी लेंगे यह कह कर रामप्रसाद बिस्मिल

फाँसी पर चढ़ गए, अंग्रेजों के हाथ नहीं लगूंगा इस प्रतिज्ञा के साथ लडे चंद्रशेखर आजाद शहीद हो गये। क्या आप में वही संकल्प, साहस और शौर्य बचा है।

मात्र 23 साल की उम्र में हँसते-हँसते फांसी चढ़ने वाले भगत

सिंह और उनके साथियों जैसा देशप्रेम आपके खून में है? भगत सिंह के आदर्श, जिनका फोटो वो अपनी जेब में ले कर घूमते थे, करतार सिंह सराबा मात्र 19 साल की उम्र में अंग्रेजों से लड़ने की रणनीति बनाते हैं और उनको

फाँसी हो जाती है। क्या वो जूनून देश की आज़ादी के लिए आपके अन्दर आता है? लन्दन में जाकर डायर को मारा और जलियांवाला बाग का बदला लिया, क्या

भारत को आजाद कराने के लिए उधम सिंह जैसा अदम्य साहस आपके अन्दर है?

अश्फाक उल्ला खां, जो लाखों क्रांतिकारियों का सपना
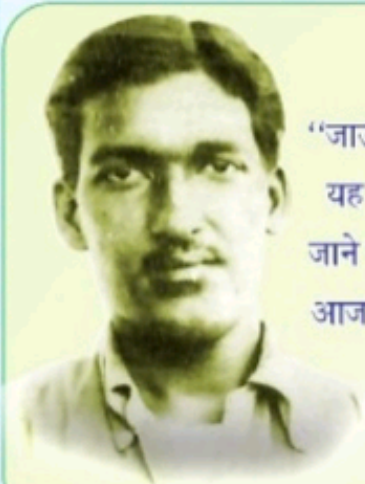
आँखों में बसाये फाँसी पर झूल जाता है। उन लाखों क्रान्तिकारियों की आँखों का वो सपना पूरा करने की तमन्ना आपके अन्दर भी है तो आओ संकल्प करें ....

."शहीदों के सपने को अपना सपना बनायेंगे,
इसे पूरा करने के लिए जी जान हम लगायेंगे
सौगंध है इस पवित्र मिटटी की, खून दे कर भी,
अंग्रेजो को हराएंगे और भारत माँ को आजाद कराएँगे"

तो साथियों अन्धेरे को कोसने से बेहतर है एक चिराग जलाना। हम इस सिद्धान्त को मानने वालों में से हैं। इसिलए युवा क्रान्ति के परचम तले हम खुद को व्यवस्थाओं को कोसने मात्र तक सीमित न करते हुए सम्पूर्ण व्यवस्था परिवर्तन की इस लड़ाई को आगे बढ़ाते हुए सच्ची आज़ादी लाने के लिए संकल्पबद्ध हैं। परन्तु यह कार्य बहुत बड़ा है। आपका साथ मिले बगैर यह पूरा नहीं हो पाएगा। हमें आपसे तन-मन-धन से सहयोग मिलने का पूरा विश्वास है।

यह पुस्तक हमारी मासिक पत्रिका की भूमिका के लिए है। पत्रिका का प्रथम अंक जनवरी 2017 में प्रकाशित होगा। हमें यकीन है कि 100वें अंक पर पहुँचने तक हम और आप मिलकर भारत को हर तरह की गुलामी से मुक्त करा लेंगे और फिर उसके बाद एक नए आज़ाद समाज का निर्माण करने की ओर आगे बढ़ेंगे, जिसमें साम्प्रदायिकता, जातिवाद, क्षेत्रवाद आदि से ऊपर उठकर व्यक्ति, समाज और प्रकृति के बीच समन्वय हो सके। तभी हम सब प्रेम व आनन्द के साथ स्वतंत्र और स्वावलम्बी जीवन जी पाएँगे। इसी के साथ ही हम भारत को विश्वगुरु बनाते हुए दुनिया को भी एक नई दिशा और उम्मीद देंगे।

-भारतीय परिवार

आज पूरा विश्व गरीबी, शोषण, महँगाई, बेरोज़गारी, आतंकवाद, साम्प्रदायिकता, फाँसीवाद, अशान्ति जैसी अनेक समस्याओं के कुचक्र में फँसा हुआ है और गम्भीर चुनौतियों का सामना कर रहा है। उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण (एल.पी.जी.) आधारित इस एकरूपी व्यवस्था से पूरे विश्व का अधिकतम सीमा तक दोहन हो रहा है। मनुष्य, समाज और पर्यावरण के बीच निरन्तर सामंजस्यपूर्ण रिश्ते को नष्ट कर दिया गया है। 60 प्रतिशत जनता को आज भी पौष्टिक भोजन या यों कहें एक वक्त का साधारण खाना नसीब नहीं हो पा रहा है।

वैश्विक साम्राज्यवादी ताकतें दिन-प्रतिदिन मजबूत होती जा रही हैं और देश के सभी प्राकृतिक संसाधनों की लूट के लिए उन पर कब्ज़ा करती जा रही हैं। अन्तर्राष्ट्रीय बैंकरों ने आम आदमी को धोखे में रखकर उनका शोषण किया है और कुछ ही समय के भीतर सभी संसाधानों की अन्धाधुन्ध लूट के लिए वित्तीय पूँजी का कभी ना खत्म होने वाला जाल बिछा रखा है।

हमारे देश में जहाँ संस्कृतियों की विविधता है, उस विविधता को तोड़ने के लिए ब्रिटिश शासकों ने षडयंत्रों के जरिए भारतीय व्यवस्था को तहस-नहस कर दिया। आज़ादी के बाद भी ब्रिटिश शासकों द्वारा बनाई गई प्रणालियों के तहत काले अँग्रेज़ 1947 के बाद से हम पर शासन कर रहे हैं। इस दौरान हमने सिर्फ शासक बदले, व्यवस्था नहीं बदली। हम लोगों का यह दुर्भाग्य है कि भारत में आज भी काले अँग्रेज़ों की ब्रिटिश शासन आधारित व्यवस्था कायम है। 1990 के बाद उभरती नव-साम्राज्यवादी नीतियों (उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण) की वजह से अन्तर्राष्ट्रीय उपनिवेशवादी ताकतों के जरिए हमारा प्यारा मुल्क भारत पहले से ज़्यादा बड़ा खतरा झेल रहा है। महँगाई, बेरोज़गारी, गरीबी, शोषण, किसान-आत्महत्या जैसी अनेक समस्याएँ अपने उच्च शिखर पर मुँह बाए खड़ी हैं। लेकिन कोई समाधान नज़र नहीं आता दिख रहा। एक छोटी-सी आशा की किरण अण्णा हजारे और बाबा रामदेव के आन्दोलन में दिखाई पड़ रही थी, लेकिन वे युवा आक्रोश को नेतृत्व देने में असफल रहे, जिसके कारण युवाओं में गम्भीर निराशा और अवसाद की स्थिति उत्पन्न हो रही है।

देश नेतृत्वहीनता के संकट से जूझ रहा था। ऐसे समय में हम कुछ नौजवानों ने इस लड़ाई को आगे बढ़ाने का फैसला किया, निर्भया आन्दोलन इसका प्रत्यक्ष उदाहरण बना।

दुनिया के इतिहास में यह देखा गया है कि परिवर्तन की तमाम प्रक्रियाओं में युवाओं की भूमिका अग्रणी रही है। चाहे वे भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लेने वाले क्रान्तिकारी नौजवान भगत सिंह, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, चन्द्रशेखर आज़ाद, अशफाकउल्ला खां, रामप्रसाद बिस्मिल, खुदीराम बोस, करतार सिंह सराबा हों या महात्मा गाँधी, जयप्रकाश नारायण जैसे नेता हों, इन्होंने युवावस्था से ही समाज को दिशा देकर यह सिद्ध कर दिखाया कि युवा नेतृत्व करने में सक्षम हैं।

आज हम सब युवाओं के सामने यह यक्ष प्रश्न खड़ा है कि अपने भारत को बचाने हेतु चुनौतियों को स्वीकार करने के लिए हम तैयार हैं या नहीं? इस परिप्रेक्ष्य में भारतीय परिवार भारत के उज्जवल भविष्य के निर्माण करने की चुनौती को स्वीकार करता है।

भारतीय परिवार क्या है?

भारतीय परिवार उन संकल्पबद्ध नौजवानों का एक अखिल भारतीय संगठन है, जो भारत में यूरोपीय मॉडल की शिक्षा, प्रशासन, अर्थशास्त्र इत्यादि के आधार पर खड़ी एकरूपी संरचना के मौजूदा स्वरूप की बजाय भारत की वास्तविक एकता और अखण्डता को कायम रखने वाली सदियों से चली आ रही व्यवस्था को प्रतिस्थापित करने के लिए प्रतिबद्ध है। एकरूपता न केवल विविधता, बल्कि एकता को भी नष्ट कर देती है। जबकि सच्ची एकता विविधता के निखरने से ही मजबूत होती है। इसीलिए भारत में अलग-अलग भाषा और भेष, आस्था और विश्वास, धर्म और सम्प्रदाय एवं संस्कृति और परम्परा होने के बावजूद जन और मानस की एकता कायम रही है।

भारतीय परिवार के पास भारत के सांस्कृतिक मूल्यों की नींव पर सद्भाव आधारित व्यवस्था स्थापित करने का एक पूर्ण सपना है। यह विकेन्द्रित संघीय ढाँचे के मूल्यों पर राष्ट्रवाद का एक देशज चित्र खींचता है। हम स्वतंत्रता, समानता, भाईचारे और सहानुभूति के सिद्धान्तों के आधार पर मानवता के मूल्यों को भी ससम्मान स्वीकार करते हैं। हमारा मानना है कि मनुष्य का विकास उसके शारीरिक, मानसिक और आध्यामिक विकास पर निर्भर है। विकास की अवधारणा मनुष्य, समाज और पर्यावरण के बीच निरन्तर सामंजस्यपूर्ण सम्बन्धों में निहित है। मनुष्य समाज और पर्यावरण के बीच सामंजस्य के सार्वभौमिक सिद्धान्त के खिलाफ कोई भी विकास भारतीय परिवार को स्वीकार्य नहीं है। भारतीय परिवार हमेशा सद्भाव बनाए रखने के सार्वभौमिक सिद्धान्त को वास्तविकता में क्रियान्वित करने हेतु आवाज़ उठाने के लिए प्रतिबद्ध है। भारतीय परिवार इसी अवधारणा पर

उड़ीसा में किसान आन्दोलन को आगे बढ़ाते भारतीय परिवार के नौजवान

एक व्यवस्थित सामाजिक-आर्थिक-राजनैतिक व्यवस्था स्थापित करने का प्रयास करेगा। भारतीय परिवार वास्तविकता को समझकर सम्पूर्ण सामाजिक परिवर्तन के लिए जनता को शिक्षित और संगठित करने के लिए एक प्रमुख उत्प्रेरक के रूप में भूमिका निभाएगा।

इसलिए दोस्तों, हम भारत राष्ट्र के उज्जवल भविष्य का निर्माण करने और उसकी सेवा करने के लिए भारत के उन साहसिक क्रान्तिकारी नौजवानों से अपील करते हैं कि वे क्रान्तिकारी परिवर्तन के इस अभियान में हमारे साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर चलें।

जय हिन्द

-हिमांशु तिवारी
भारतीय परिवार

हमने लड़ने की ठानी है, हमने हार नहीं मानी है।
जान से बढ़कर क्या लेंगे वो, जान तो आनी जानी है।।

भारत एक उद्योग प्रधान देश

प्रस्तुत लेख श्री रवीन्द्र शर्मा जी (गुरुजी) के साथ समय-समय पर हुई बातचीत एवं उनके औपचारिक तथा अनौपचारिक व्याख्यानों पर आधारित है। गुरुजी तेलंगाना के अदिलाबाद में रहते हैं। वे स्वयं लगभग सभी पारम्परिक कारीगरी (मूर्तिकला, लुहारी, सुनारी, कुम्हारी इत्यादि) में महारथ रखने के साथ-साथ लोक-ज्ञान परम्पराओं की बहुत गहरी समझ रखते हैं. चाहे वह गाँवों की व्यवस्थाएँ हों, जातियों की हों, विभिन्न समुदायों की हों। उनकी बातें सुनकर भारत के बारे में एक ऐसी तस्वीर उभरती है जिसका मेल एक तरफ महात्मा गाँधी की बातों से और दूसरी तरफ धर्मपाल जी के शोध एवं उनकी दृष्टि से बैठता है। हालाँकि तीनों अलग-अलग दिशाओं से आते हैं।

भारत को "सोने की चिड़िया" कहा जाता रहा है और यह एक कारण रहा है बाहर के अनेक आक्रमणों का। पर हमारे लोगों ने इस पर गौर करने की शायद कोशिश नहीं कि भारत "सोने की चिड़िया" बना कैसे?

यह केवल एक बार बना हो ऐसा भी नहीं है। हर बार लुटने के बाद यह फिर से समृद्ध, फिर से सोने की चिड़िया बनता रहा है। हमारा हर बार, बहुत ही शीघ्र गति से समृद्ध हो जाना भी हम पर ढेरों आक्रमणों और लगातार हुई लूट का मुख्य कारण रहा है। बुरी तरह से लुटने के बाद भी इतनी जल्द फिर समृद्ध हो जाने के कारणों पर हमने ठीक से ध्यान नहीं दिया है।

हमारे देश में कुछ मान्यताएँ बड़े पैमाने पर रही हैं, जैसे- अनाज, दूध, दही बेचना पाप माना जाता रहा है। अभी 20-25 वर्षों पहले तक बहुत सारे गाँवों में दूध, दही अनाज नहीं बेचा जाता था। "धान्य" बेचना पाप माना जाने की वजह से अनाज का व्यापार तो हुआ ही नहीं है। अनाज हमेशा लेन-देन की वस्तु रहा है।

तो सवाल उठता है हमारे पास इतना सोना-चाँदी आया कहाँ से? अँग्रेज़ों की 200 सालों की गुलामी के बाद भी 60-65 वर्षों की असीम दरिद्रता के बावजूद आदिवासी

इलाकों में जाने पर वहाँ की महिलाओं के शरीर पर तीन-तीन, चार-चार किलो चाँदी के गहने तो सहज ही देखने को मिल जाते हैं।

पाव-पाव किलो के पंजोल होते हैं। सौ-डेढ़ सौ तोले (एक-डेढ किलो) का तो कमर का पट्टा होता है। पौन किलो की गले की हसली होती है। इसके अलावा हाथ के, पैरों के, बाजुओं के, सिर के, उँगलियों आदि शरीर के ढेरों आभूषण होते हैं। कम से कम दो-ढ़ाई किलो चाँदी तो उनके शरीर पर आसानी से हुआ करती थी।

कभी हमने सोचा कि इतनी चाँदी इनके पास आई कहाँ से होगी? जंगल में रहने वालों के पास, आदिवासियों के पास इतनी चाँदी! क्या ये लोग झाड़-पेडों से या जडी-बूटियों से चाँदी निकाला करते थे? आखिर यह चाँदी आई कहाँ से?

सोचने वाली बात यह भी है कि भारत में सोने की कुछ खदानें तो पाई जाती है पर चाँदी की तो किसी भी खदान का पता नहीं चला है। हिन्दुस्तान में चाँदी कभी भी खदानों से निकली नहीं है। सोना निकाला है, हीरे निकले हैं, पर चाँदी नहीं निकली है।

इसी तरह हमारे देश में कई आक्रमण हुए, हम लूटे गए, यह तो हमें ज्ञात है। दूसरे देशों पर आक्रमण कर, वहाँ से बेशकीमती, चीज़ें, धन-दौलत लूटकर भारत में लाई गईं हों, इस तरह का कोई उल्लेख हमारे या विश्व के किसी अन्य इतिहास में नहीं मिलता। अर्थात, हमारे यहाँ का धन-दौलत . सोना, चाँदी, हीरा आदि बाहर से लूटकर नहीं लाया गया है।

आधुनिक पढ़ाई से एक भ्रम फैला है की भारत एक "कृषि-प्रधान" देश है। जबकि सच्चाई यह है कि भारत हमेशा से एक "उद्योग-प्रधान" देश है।

हाँ, यहाँ की ग्रामीण अर्थव्यवस्था ज़रूर कृषि-प्रधान रही है। पर यहाँ तो घर-घर में एक कारखाना था। पूरा देश कारीगरी-प्रधान था। आज की तरह हर किसी को न कृषि का अधिकार था न ही उसे करने की सबके

पास दक्षता थी। अनेक कारीगर जातियों (असल में जाति, ज्ञाति का बिगड़ा रूप लगता है, यानि जो विशेष जानकारी रखते हैं), जैसे . कुम्हार, लुहार, सुनार, सुतार, बसोड़ आदि की तरह कृषि मे लगे लोगों की भी जातियाँ थी, जिन्हें कुनबी, कुर्मी आदि कहा जाता था। इनके अतिरिक्त शेष सभी या तो कारीगरी या भिक्षावृति के कार्यों में लगे हुए थे।

जब देश में चाँदी की खदानों का पता नहीं है, हीरे और रत्नों की भी कोई विशेष खदानें यहाँ नहीं हैं, और उसके ऊपर से अनाज बेचना एक पाप होने की वजह से अनाज का कोई व्यापार हुआ नहीं। तो फिर इतनी सारी धन-सम्पदा हमारे पास आई कहाँ से?

स्वाभाविक है, उद्योग एवं व्यापार से। व्यापार भी उन वस्तुओं का जो कि हमारे उद्योगों द्वारा निर्मित की गईं हैं न कि कृषि उत्पादों के व्यापार से। हमारे कारीगरों, उनके कारीगरी सामर्थ्य और उनके कारखानों की बदौलत ही भारत "सोने की चिड़िया" कहलाया।

देश का जो सारा धन था, जिसके कारण इसे "सोने की चिड़िया" कहा जाता था, वह सारा का सारा धन हमने व्यापार करके कमाया था, किसी और माध्यम से नहीं।

यहाँ का सारा बाहरी व्यापार कारीगरी वस्तुओं का ही हुआ है। लोहा, नमक, रत्न, संस्कारित मसाले, ढेरों अन्य कारीगरी सामान आदि व्यापार की प्रमुख वस्तुएँ रही हैं।

19वीं शताब्दी तक विश्व निर्यात के क्षेत्र में भारत के अग्रणी बने रहने के कई प्रमाण आज उपलब्ध हैं। भारत के उद्योग, भारत की कारीगरी न केवल घर-घर में व्याप्त थी, बल्कि बहुत ही उत्तम दर्जे की थी। भारत को सोने की चिड़िया नाम से प्रसिद्धि दिलाने में भारत के उद्योगों, भारत की कारीगरी की बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका थी।

इस दृष्टि से देखने पर भारत हमेशा से एक उद्योग-प्रधान देश ही नज़र आता है। पूरा देश विभिन्न तरह के औद्योगिक कौशल एवं कारीगरी उत्पादों का वैश्विक व्यापार ही हमारी अकूत धन-सम्पदा का कारण था। अँग्रेज़ों के भारत में आगमन से पहले और उसके बहुत समय बाद तक भारत विश्व व्यापार में 25-30 प्रतिशत की हिस्सेदारी के साथ पहले स्थान पर रहा करता था। उस दौरान व्यापार की जाने वाली वस्तुओं में कारीगरी उत्पादों और प्रसंस्करित मसालों की प्रमुखता रही है, न कि कृषि उत्पादों की।

भारत को "कृषि प्रधान" देश का ठप्पा लगाना और उसके माध्यम से हमारी अपने देश के बारे में इस तरह की छवि का निर्माण करना, अँग्रेज़ों की एक सोची-समझी चाल थी।

एक ओर उसे अपने बढ़ते सम्राज्य और उनके नए-नए विशालकाय उद्योगों में लगने वाले कच्चे माल के लिए कई तरह के कृषि उत्पादों की ज़रूरत थी (कपास, नील इत्यादि)! दूसरी ओर, इन बड़े-बड़े उद्योगों से निकले उत्पादों की सरलता से बिक्री के लिए भारत के गाँव-गाँव में फैले विकेन्द्रीकृत उद्योगों (कारीगरी) को बन्द करना आवश्यक था। भारतीय कारीगरों से मिलने वाली कठिन प्रतियोगिता खत्म करने के लिए, साम, दाम, दण्ड, भेद की नीतियाँ अपनाकर हमारे कारीगरों को धीरे-धीरे उनकी कारीगरी विधाओं से बेदखल कर दिया गया और उन सभी को कृषि के कार्य में विस्थापित किया। अन्यथा, इसके पहले तक परम्परागत कुनबी (कुर्मी) जाति के अतिरिक्त अन्य किसी भी जाति के लोगों को कृषि कार्य में संलिप्त होने की ज़रूरत नहीं थी। इस तरह हमारी सारी कृषि योग्य ज़मीन और हमारा सारा कृषि कार्य पीढ़ियों से विशेषज्ञ जाति (ज्ञाति) के पास सुरक्षित थी।

अँग्रेज़ों और उनके बाद आज आज़ादी मिलने के 70 साल बाद तक हमारे बारे में हम पर थोपी हुई गलत धारणाओं के कारण (कि हम एक कृषि-प्रधान समाज हैं), हमारी नीतियाँ हमारे सारे प्रोत्साहन कृषि क्षेत्र को दिए गए और उसका नतीजा हमारे सामने है। आज एक ओर, भारत की विश्व व्यापार में भागीदारी घटकर 1-2 फीसदी के आस-पास आ गई है। जबकि दूसरी ओर कृषि क्षेत्र में मिले ढेरों प्रोत्साहनों के कारण और कारीगरी से बेदखल लोगों को कोई अन्य विकल्प न सुझाए जाने के कारण, कृषि कार्य में उसकी क्षमता से ज़्यादा लोग लगे हुए हैं। जिसके कारण यह क्रमशरू घाटे की आजीविका रह गई है।

कारीगरी क्षेत्र (बहुत सारी नई कारीगरी विधाओं के साथ) अभी भी देश में कृषि के बाद सबसे बड़ा रोज़गार प्रदाता क्षेत्र है। विभिन्न अध्ययनों के माध्यम से देश में कारीगरी पर आधारित जनसंख्या 25 से 30 करोड आँकी गई है।

परन्तु, जिस तरह का आर्थिक तंत्र कृषि क्षेत्र के लिए प्रदान किया जाता रहा है . विशालकाय ऋण माफी कार्यक्रम, ऋण प्रदायक तंत्र (किसान क्रेडिट कार्ड, क्रॉप लोन, कृषि सहकारी समितियाँ, को-ऑपरेटिव बैंक, व्यवसायिक और निजी बैंक), खाद एवं बीज आदि में मिलने वाली छूट, विभिन्न तरह की तकनीकी सहायता तंत्र (स्वतंत्र मंत्रालय, विभिन्न विभाग, कृषि विश्वविद्यालय, महाविद्यालय, सरकारी एवं गैर-सरकारी शोध संस्थाएँ, देश भर में फैला कृषि विज्ञान केन्द्रों का जाल इत्यादि), भण्डारण एवं विपणन तंत्र, फसल बीमा एवं इसके अलावा अनेक प्रकार के बजटीय प्रावधान आदि के मुकाबले समूचा कारीगरी क्षेत्र एकदम अछूता सा रह गया है।

जिस तरह का प्रोत्साहन एंव सहयोग-तंत्र कृषि क्षेत्र के

लिए कार्य कर रहा है लगभग उतना ही, बल्कि उससे भी विशाल प्रोत्साहन एवं विस्तृत सहयोग-तंत्र देश एवं प्रदेश में बड़े उद्योगों एवं राष्ट्र में औद्योगिकरण को बढ़ावा देने के लिए कार्य कर रहा है।

लेकिन, इस व्यवस्था में कारीगरी क्षेत्र और उससे सम्बन्धित समूचे कार्य हमारे मूलभूत उद्योग होने के बावजूद कहीं छूट गए हैं।

कृषि क्षेत्र में निर्भरता बढ़ने से पहले, हमारे समाज में कारीगरी के क्षेत्र में तरह-तरह का सामर्थ्य सहज ही भरा पड़ा था। हम उद्योग-प्रधान देश होने के नाते न केवल कारीगरी एवं औद्योगिक कौशल के मामले में अग्रणी थे, बल्कि उससे भी बढ़िया हमारा व्यापारिक कौशल था। गाँवों में मार्केटिंग और मार्केटिंग के बाद धन के बँटवारे को लेकर कुछ स्वंतत्र व्यवस्थाएँ, कुछ पक्के नियम थे, जिनका लोग बहुत कड़ाई से पालन किया करते थे।

हमारी उन व्यवस्थाओं के कारण ही दूर देशों के व्यापार से प्राप्त हुई चाँदी, सुदूर गाँवों के आदिवासियों इलाकों तक की बराबर पहुँचती रही है। इन नियमों में सबसे पहला नियम था कि गाँवों के लोगों से कमाए पैसों से गाँव के बाहर की कोई चीज़ नहीं खरीदी जा सकती। बाहर की चीज़ खरीदनी हो, तो गाँव के बाहर से पैसा कमाना होता था।

गाँव के कारीगर, गाँव की ज़रूरतों को तो पूरा करते ही थे, मगर उसके बाद भी इनके पास बहुत समय रहता था। अपने खाली समय में और बारिश के मौसम आदि में ये लोग बहुत सुन्दर-सुन्दर चीज़ें बनाते थे। ये चीज़ें

या तो जात्राओं में बिकती थीं या फिर बाहर के देशों में व्यापार के लिए चली जाती थीं। ये लोग गाँव के बाहर जात्राओं से कमाकर वहीं से सोना खरीदकर लाते थे। गाँव में चीज़ें बेचकर सोना नहीं खरीदा जाता था। आजकल तो इसके विपरीत गाँव के पैसे से बाहर की चीज़ें गाँव में प्रवेश कर रही हैं। गाँव का पूरा पैसा बाहर के बाज़ारों की चीज़ें खरीदने में लग रहा है। गाँव की पूरी समृद्धि इसी रास्ते गाँव से बाहर जा रही है।

इसी प्रकार हमारे यहाँ वैश्य वर्ग कोई अलग समाज या अलग जाति नहीं थी। हर कारीगर वर्ग में से एक छोटा सा समूह होता था जो अपने और अपने समाज के लोगों की बहुत सारी चीज़ों को गाँव और देश से बाहर बेचने के लिए निकलता था। जुलाहों में से एक समूह, चर्मकारों में से एक समूह, बढ़ईयों में से एक समूह निकालता था और ये सारे लोग मिलकर बाहर के व्यापार के लिए जाते थे।
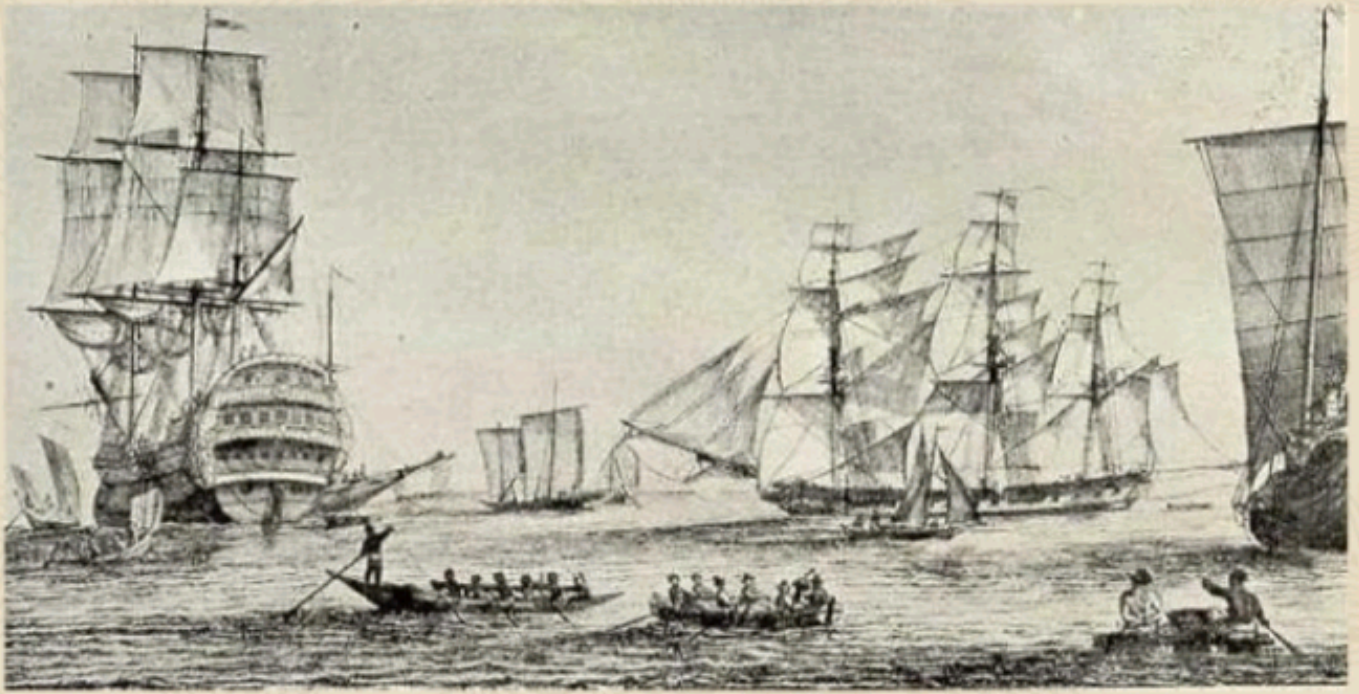
हमारे यहाँ व्यापार दो तरीकों से चला है। एक तो पानी के द्वारा . जहाज, नाव आदि के माध्यम से और दूसरा सड़कों के द्वारा सार्थवाह के माध्यम से। पुराणों आदि से लेकर अनेक किस्से-कहानियों में वैश्यों के ढेरों ज़िक्र आते हैं।

हमारे यहाँ एक चन्द्रगुप्त वेदालंकार हुए हैं। बहुत छोटी उमर में ही गुज़र गए थे। मगर उस छोटी से उम्र में ही उनकी एक बहुत ही ज़बदस्त किताब देखने में आई थी -वृहत्तर भारत। उसमें भारत के रास्तों का एक बहुत बड़ा अध्ययन सरीखा था। देश के विभिन्न रास्तों का बहुत ही विस्तार से वर्णन था कि व्यापार के लिए हम कौन-कौन से रास्ते इस्तेमाल करते थे, तीर्थों के लिए हम कौन से रास्ते इस्तेमाल करते थे आदि।

उस पुस्तक में सार्थवाहों की पूरी पद्धति का भी बहुत विस्तार से वर्णन मिलता है कि एक-एक समूह में किस-किस तरह के कितने-कितने लोग होते थे। इनके साथ कौन-कौन सी सुविधाएँ और कैसी-कैसी व्यवस्थाएँ होती थीं? सार्थवाहों के साथ में बाकायदा उनकी सेना चलती थी। उनके स्कूल इत्यादि भी साथ में ही चलते थे। उनके वैद्य एवं अन्य चिकित्सीय सहायता तो साथ में चलती ही थी। एक-एक सार्थवाह में हज़ारों लोग एक साथ चलते थे। इतने सारे लोगों के राशन-पानी की, दैनिक शौच इत्यादि की व्यवस्थाओं की विस्तृत जानकारी इस पुस्तक में मिलती है।

लोगों की लम्बी दूरी तय करके एक स्थान से दूसरे स्थान, जैसे - तमिलनाडु से तक्षशिला आदि जाना होता था तो वे किसी सार्थवाह में अपना नाम लिखा देते थे। नियत समय पर जब सार्थवाह उस जगह से गुज़रता, तो वह उनके साथ हो जाता था। काशी जाना है या कहीं और की यात्रा करनी हो तो वे किसी सार्थवाह के साथ निकल जाते थे। चूँकि उनकी पूरी व्यवस्था उनके साथ चलती थी, इसीलिए किसी भी चीज़ की चिन्ता

करने की ज़रूरत नहीं होती थी।

इन दोनों तरीकों (पानी और सड़क) के व्यापारों में, ये लोग विदेशों में जाकर अपना सामान आदि बेचकर बदले में चाँदी आदि लाते थे। फिर उसको अपने-अपने समाजों में जिसका जितना हिस्सा हुआ, उस हिसाब से बाँट देते थे। कुछ समय बाद फिर से लोगों का समान लेकर निकल पड़ते थे।

कई शताब्दियों से कई पीढ़ियों से इसी तरह की पद्धति चलती रहने से, इसी तरह आने-जाने से उन सारे लोगों की जातियाँ अलग-अलग होते हुए भी उनकी दिनचर्या एक जैसी हो गई है। उठना-बैठना सोना, खाना-पीना और भी बाकी सारा काम लगभग एक जैसा हो गया था।

अँग्रेज़ों के आने के बाद से जब इनका यह व्यापार और व्यापार का यह ढंग टूटा तो ये सारे लोग अपनी दुकानें लगाकर बैठ गए। यही समाज वैश्य वर्ग कहलाया। इसीलिए वैश्य एक वर्ण था, न कि एक जाति। उसमें बहुत तरह के लोग बहुत सी जातियों के लोग नज़र आते हैं।

इसी तरह क्षत्रिय वर्ण का भी है। हमारे यहाँ "क्षात्र" न तो अपने आप में कोई जाति रही है और न ही यह किसी की "वृत्ति" रही है। हर जाति का एक समूह अपने आप को क्षत्रिय मानता था। इस समय जो क्षत्रिय हैं, वह हर जाति में से निकला हुआ एक समूह था . चर्मकारों में से समगार निकले थे, जुलाहों में से रंगारे थे, ब्राहणों में से भूमिहार थे। इसी तरह हर जाति एक ग्रुप था। यह सब कुछ हज़ार साल से ऐसे ही चलता रहा था।

अदिलाबाद के लोहे को दमश्क कहते हैं। वहाँ जो दश्मिक शहर है, वह इसी लोहे के नाम से पड़ा है। अदिलाबाद का लोहा तलवारों के लिए बहुत मशहूर था।

अध्ययन का एक प्रश्न रहा है कि आखिर अदिलाबाद के इलाके में आदिवासियों के पास इतनी चाँदी आई कहाँ से? क्योंकि उस इलाके के आदिवासियों के पास थोड़ी बहुत चाँदी नहीं है, बहुत चाँदी है।

एक बार अदिलाबाद में वहाँ के एक आदिवासी क्रान्तिकारी कोमराम भीम पर एक फिल्म बन रही थी। उस फिल्म के आर्ट डायरेक्टर होने के नाते मैने वहाँ के बहुत से इलाकों में घूमकर वहाँ के गहनों आदि की जानकारियाँ इकट्ठी की थी। उस दौरान कई सुनारों से भी मिला। उनसे मिलने पर मेरा प्रश्न यही हुआ करता था कि पिछले दस सालों में उन लोगों ने लगभग कितनी चाँदी गला ली होगी? और उन सभी के उत्तर आश्चर्यजनक हुआ करते थे। दस सालों के अन्दर उनमें से लगभग सभी ने 6 से 10 किलो चाँदी के गहने गला ड़ाले थे। पूछने पर पता चला कि पता नहीं क्यों, मगर लोग अपनी चाँदी बेचते जा रहे हैं। उस समय तो खैर

ये आदिवासी लोग अपनी चाँदी बेच रहे थे मगर पहले उन्होंने यह चाँदी कमाई कैसे? इनके पास आखिर इतनी चाँदी आई कहाँ से?

बडी आसानी से यह पता लगा कि पहले आदिवासी समाज आजकल की तरह तथाकथित मुख्यधारा से इतना कटा हुआ नहीं था। अदिलाबाद कस्बे के सारे पशु इन आदिवासियों के पास जँगल में रहा करते थे। अदिलाबाद बस्ती के केवल दूध देने वाले पशु ही लोग अपने पास गाँव मे रखते थे। बाकी सारे पशु जंगलों में आदिवासियों के पास छोड़ दिए जाते थे। उसके लिए बाकायदा उन्हें अनाज दिया जाता था। हज़ारों पशु उनके पास होते थे।

पशु के मर जाने के बाद उसका चमड़ा, सींग आदि

अन्य सारी चीज़ें वे लोग ही रखते थे। इन सारी चीज़ों पर उनका अधिकार हुआ करता था। बस्ती के चर्मकारों को चमड़े की ज़रूरत होने पर वे उनके पास जाकर बदले में चाँदी आदि देकर अपनी ज़रूरत का चमड़ा लाते थे।

इसी तरह बंगलगिरि समाज के लोग हैं, जो चूड़ी बनाने का काम करते हैं। वे लोग भी साल में दो-तीन बार उनके पास जाकर बदले मे चाँदी आदि देकर सींग लाते थे, जिससे चूडियाँ तैयार होती थीं।

इसके अलावा जंगलों में एक विशेष तरह की घास भी होती थी। आदिवासी लोग उस घास की कटाई करके अपने पास रखते थे। वहीं जंगलों में भट्टियाँ लगाकर उसका तेल निकालते थे। बस्ती में उस घास से निकले तेल का व्यापार करने वाले व्यापारियों का एक समूह था। वे जंगलों में जाते थे, बदले में चाँदी देकर उनसे घास का तेल निकलवा लेते थे।

इसके अलावा, ये लोग बहुत तरह की जडी-बूटियाँ तैयार करते थे। इस तरह उनके पास बहुत सी चाँदी इकट्ठी होती रहती थी।

इन सारी पद्धितियों के टूटने के बाद से ये लोग कंगाल होने लगे। नतीजतन, उन्हें अपनी चाँदी बेचने की नौबत आ गई।

इससे पहले ये लोग समाज में इतना कटे हुए नहीं थे। रहते ज़रूर जंगलों में थे, मगर समाज के साथ जुडे हुए थे।

व्यापार के इन्हीं तौर-तरीके के प्रतीक के तौर हमारे यहाँ आज भी दशहरे के अवसर पर "सीमोल्लंघन" की परम्परा निभाई जाती है। चूँकि गाँव के भीतर व्यापार का निषेध हुआ करता है, इसलिए लोग गाँव की सीमा का उल्लंघन करके गाँव के बाहर जाते हैं और उस सीमा के बाहर से श"सोने" और "चाँदी" के रूप में "शमी" की पत्तियाँ लेकर आते हैं।

यह सोना और चाँदी भी स्वयं के उपयोग के लिए या स्वयं के घर में ले जाकर कर रखने के लिए नहीं होता है, बल्कि इसे आपस में गले मिलकर लोगों में बाँटा जाता है। ठीक उसी तरह जैसे बाहर से वैश्य वर्ण के लोगों के द्वारा कमाकर लाई गई धन-सम्पदा को वे लोग अपने कारीगर बन्धुओं में बाँट दिया करते थे।

यह हमारे देश की उद्योग-प्रधान प्रकृति, व्यापार की पद्धतियाँ और व्यापार, लाभ के बँटवारे की हमारी अपनी व्यवस्थाएँ थीं जिसके कारण हमारा देश सोने की चिड़िया कहलाया और व्यापार का लाभ कुछ ही हाथों में न सिमटकर सभी लोगों तक बराबरी से पहुँचा था।

-रवीन्द्र शर्मा

लेख का श्रेय आशीष गुप्ता को जाता है जिन्होंने पिछले कई वर्षों से गुरुजी की बातों को संकलित किया है।

अंग्रेजो, भारत वापस आओ!

इतिहास अपने आपको दोहराने जा रहा है। वित्तमंत्री के लन्दन में दिए गए भाषण ने इस देश में एक नई जान फूँक दी है। अँग्रेज़ों को भारत लौटने का न्यौता दिया जा चुका है। वित्तमंत्री ने तो दिलेरी के साथ अपना फर्ज़ अदा कर दिया है। गेन्द अब अँग्रेज़ों के पाले में है।

लन्दन के इण्डिया हाउस में ब्रिटिश उद्योगपतियों को सम्बोधित करते हुए हमारे वित्तमंत्री ने कहा, "हिन्दुस्तान का मौसम बहुत अच्छा है। हिन्दुस्तान के मज़दूर दुनिया के सबसे सस्ते मज़दूर हैं। हिन्दुस्तान जैसा बड़ा बाज़ार आपको कहाँ मिलेगा? आइए, हिन्दुस्तान में पूँजी लगाइए। हिन्दुस्तान की गरीबी दूर कीजिए। इस बार हम आपकी इतनी बढ़िया देखभाल करेंगे कि आप वापस जाने का नाम नहीं लेंगे।"

किसी न किसी को तो पहल करनी थी। वित्तमंत्री हॉर्वर्ड युनिवर्सिटी में पढ़े हैं। अपने मुल्क के साथ गद्दारी करने की तालीम हर जगह हासिल नहीं की जा सकती।

अँग्रेज़ों को इस बात का पूरा यकीन था कि एक दिन उन्हें वापस ज़रूर बुलाया जाएगा। जब वे गए थे तो अपनी मर्ज़ी से नहीं गए थे। कुछ सिरफिरे क्रान्तिकारियों, बागी किसानों और जुनूनी नौजवानों ने उनका मज़ा किरकिरा नहीं किया होता तो उनके साम्राज्य का सूरज कभी अस्त नहीं होता।

जाते समय अँग्रेज़ों ने अपनी वापसी का पूरा इन्तज़ाम कर लिया था। 1947 में जिन्हें सत्ता सौंपी गई, वे उनके भरोसे के लोग थे। जिसे आज़ादी की संज्ञा दी गई, वह सत्ता का हस्तान्तरण था - ट्रांसफर ऑफ पॉवर। भारत का शासन कुछ सालों के लिए काले अँग्रेज़ों को लीज़ पर दे दिया गया था।

अँग्रेज़ों को इस बात का पूरा एहसास था कि अगर उन्होंने हिन्दुस्तान के लिए कायदे-कानून नहीं बनाए, तो उनके जाने के बाद यह काम कभी नहीं हो सकेगा। आखिर जो कौम दो सौ सालों तक गुलाम रही है, उसे कायदे-कानून बनाने की तमीज़ कहाँ से आएगी?

भारतीयों को सत्ता सौंपते वक्त अँग्रेज़ों ने कहा, "आप हमारा संविधान ले लीजिए। हमारे कायदे-कानून ले लीजिए। आखिर इन्हीं के सहारे हमने हिन्दुस्तान पर दो सौ सालों तक शासन किया है। आपको भी इसी तरह ऐश करना है तो नए कानून बनाने की ज़हमत मत उठाइए।"

अँग्रेज़ों के बनाए गए हज़ारों कानून आज भी इस देश में चल रहे हैं। पिछले 70 वर्षों में अँग्रेज़ों की इस विरासत पर ज़रा भी आँच नहीं आई है। स्वामीभक्ति का ऐसा उदाहरण दुनिया के किसी अन्य इतिहास में मिलना मुश्किल है। अँग्रेज़ों ने भी कभी नहीं सोचा होगा की उनके जाने के 70 साल बाद भी उनके कानून हिन्दुस्तान पर हुकूम कर रहे होंगे। यह अँग्रेज़ों के बनाए गए कानूनों का कमाल है कि आज तक एक भी बड़े आदमी को सज़ा नहीं हुई है। वरना हम सब जानते हैं कि कम से कम तीन चौथाई राजनेता और प्रशासनिक अधिकारी आज जेल में होते। इनके लिए नए जेलें बनवानी पड़तीं। अच्छा हुआ जो हमारी सरकारों ने अँग्रेज़ों के कानून नहीं बदले, वरना एक पंचवर्षीय योजना का सारा धन नई जेलें बनवाने में ही खर्च हो जाता।

हमारे देशी उद्योगपतियों ने जिस असाधारण समर्पण भाव से अँग्रेज़ों का खयाल रखा, उसका एहसान अँग्रेज़ किस तरह से चुकाएँगे? यह मेरी समझ से परे है। इस बार "राय बहादुर" और "खान बहादुर" जैसे खिताबों से कार्पोरेट जगत् मानने से रहा।

अँग्रेज़ों की बड़ी-बड़ी कम्पनियों के एजेंट, या यूँ कहिए मैनेजर, बनने में उद्योगपतियों ने कभी शर्म महसूस नहीं की। सिर्फ अपनी नाक बचाने के लिए इन्होंने इसे कोलॅबोरेशन का नाम दिया। कहीं अँग्रेज़ नाराज़ न हो जाएँ इसलिए भारतीय उद्योगपतियों ने टेक्नोलॉजी तक ईज़ाद नहीं की। अगर सारी चीज़ें हमारे यहाँ बनने लग गईं तो अँग्रेज़ों का माल कौन खरीदेगा?

उनके यहाँ किस चीज़ की कमी हैं? सुई से लेकर जहाज तक वे हमारे लिए बना रहे हैं।

इस मामले मे शासकों का रवैया प्रातःस्मरणीय और वन्दनीय कहा जा सकता है। अँग्रेज़ी राज में भारतीय उत्पादनों पर जितने टैक्स लगाए गए थे, वे आज भी बदस्तूर जारी हैं। एक्साइज ड्यूटी, सेल्स टैक्स, टर्न ओवर टैक्स और ऊपर से इनकम टैक्स। और तो और, दुनिया के किसी भी मुल्क में माल की आवाजाही पर टैक्स नहीं है। हमारे यहाँ चुंगी कर - ऑक्ट्राय - आज भी लागू है।

कुछ लोग इन करों को हटाने की बात करते हैं। हमारे शासक ऐसा नहीं होने देंगे। ये अँग्रेज़ों की निशानियाँ हैं। ये दो सौ सालों की लूट और ज़ुल्म की निशानियाँ हैं। ये निशानियाँ अगर मिट गईं तो शासक अँग्रेज़ों को क्या मुँह दिखाएँगे? किस बूते पर अँग्रेज़ों को वापस आने के लिए कहेंगे?

अँग्रेज़ यह मानते थे कि किसी कौम को नष्ट करना हो, तो सबसे पहले उसकी शिक्षा-प्रणाली को नष्ट कर दो। अँग्रेज़ों की शिक्षा-प्रणाली में आज़ाद भारत में आज तक कोई बुनियादी फेरबदल नहीं किया गया है। ऐसी निष्काम सेवा के लिए हमारे शिक्षा-शास्त्रियों को एक-एक दर्ज़न "भारत रत्न" दिए जाने चाहिए। इस संख्या में बढ़ोतरी भी की जा सकती है। हर स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालय में विचरण कर रही मैकाले की आत्मा कितनी गद्‌गद हो रही होगी, इसका अन्दाज़ा वे लोग नहीं लगा सकते, जिसकी आत्माएँ मर चुकी हैं।

विदर्भ के किसान नेता से लेकर दिल्ली विश्वविद्यालय व जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्री सभी वित्तमंत्री की हौसला अफज़ाई कर रहे हैं। इण्डियन मर्चेंट चेम्बर के एक सदस्य का मानना है कि वित्तमंत्री ने समय रहते अँग्रेज़ों से भारत वापस आने की पेशकश

न की होती, तो देश तबाह हो जाता। देश आज अरबों डॉलर के कर्ज़ तले डूबा है। अब चिन्ता की कोई बात नहीं है। अँग्रेज़ आएँगे और सारा कर्ज़ चुका देंगे।

सुप्रीम कोर्ट के वकील, उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री, जिनका समाजवाद पर आजकल एकाधिकार है और अँग्रेज़ी के ख्याति प्राप्त स्तम्भ लेखक वित्तमंत्री की पीठ ठोंक रहे हैं। भारतीय वामपन्थ के विलक्षण शिल्पकार तो पगला गए हैं। अँग्रेज़ों के साथ गठबंधन कर देश में साम्प्रदायिक ताकतों को समाप्त करने की रणनीति पर पॉलित ब्यूरों में बहस शुरू भी हो गई है। चाँद में दाग हो सकता है, अँग्रेज़ों की धर्मनिरपेक्षता में नहीं। मायावती जी ने अपने पुरज़ोर समर्थन में कहा, "संविधान भले ही अँग्रेज़ों का दिया हुआ हो, उसे लिखा तो बाबा साहेब आम्बेडकर ने ही है।"

वित्तमंत्री के लिए ऐसा ऐतिहासिक समर्थन ज़रा-भी अप्रत्याशित नहीं है। उन्हें पता था - हर राजनीतिक पार्टी की आत्मा एक ही है, सिर्फ बैनर अलग-अलग हैं। किसी भी राजनैतिक पार्टी की सरकार को विदेशी कम्पनियों के साथ सौदे करने से ऐतराज़ नहीं है। वे दिन लद गए जब कमीशन खाना देशद्रोह माना जाता था। अँग्रेज़ी राज में चोरों और ठगों ने मिलकर जितना हिन्दुस्तान को लूटा होगा, उससे ज्यादा माल तो आज मात्र एक वर्ष में एक बहुराष्ट्रीय कम्पनी अपने मुनाफे के रूप में ले जाती है।

लेकिन मैं वित्तमंत्री जी से सहमत नहीं हूँ। आखिर अँग्रेज़ों को बुलाने की ज़रूरत क्या है? कौन कह सकता है कि अँग्रेज़ चले गए हैं? हमारे उठने, बैठने,

साँस लेने, जीने की हर गतिविधि में अँग्रेज़ मौजूद हैं। कोई ऐसे ही थोड़े चला जाता है अपनों को छोड़कर? चले गए लेकिन औलाद छोड़ गए। दलाल छोड़ गए। आफरीन!

कहाँ नहीं हैं अँग्रेज़? काला कोट पहनकर अदालत में मौजूद हैं। खाकी वर्दी पहने हुए थाने में मौजूद हैं। लिप्टन चाय की चुसकियाँ लेते हुए हर दिवानखाने में मौजूद हैं। मैंने हर बार उसे संसद में बजट पेश करते हुए देखा है। लम्बा चोगा पहनकर दीक्षान्त-समारोह में स्नातकों को डिग्रियाँ बाँटते हुए देखा है। सात-घोड़ों की बग्घी में सवार होकर गणतंत्र दिवस की हर परेड में सलामी लेते हुए देखा है।

अँग्रेज़ हर चुंगी नाके पर जज़िया वसूल रहा है। फॉरेस्ट अफसर की हैसियत से आदिवासियों पर लाठियाँ बरसा रहा है। मन्दिरों को मस्ज़िदों से लड़वा रहा है। किंगफिशर की एक बोतल पर रॉक संगीत का कैसेट मुफ्त दे रहा है। बेटियों और बहनों को लेडी डायना की लाइफ-स्टाइल परोस रहा है।

संविधान अँग्रेज़ों का, संसदीय लोकतंत्र व कानून अँग्रेज़ों का, न्याय और प्रशासनिक व्यवस्था अँग्रेज़ों की, शिक्षा प्रणाली अँग्रेज़ों की, भाषा अँग्रेज़ों की। मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि इतिहास में एक दिन ऐसा आएगा जब आपको असली और खानदानी अँग्रेज़ सिर्फ हिन्दुस्तान में मिलेंगे, इग्लैण्ड में नहीं।

-लेख दाल-रोटी पत्रिका से

(1988 में प्रकाशित)

मज़ाक तो उन्हीं का उड़ाया जा सकता है, जिसके पास खाने को नहीं है, पहनने को नहीं है और रहने को नहीं है। हमारे यहाँ एक कहावत मशहूर है । गरीब की जोरू, सबकी भाभी! आज की दुनिया में भारत गरीब की जोरू ही है। सिंगापुर का प्रधानमंत्री हो या अमेरिका का विदेश सचिव, हर कोई दिल्ली में आकर घोषणा कर जाता है कि भारत बहुत जल्द महाशक्ति बन जाएगा। मुझे तो ऐसा लगता है जैसे भारत को महाशक्ति बनाने के अलावा इनके पास करने को कुछ बचा ही नहीं।

नशे का आतंक

कुछ दिन पहले नशे की समस्या पर एक फिल्म आई थी 'उड़ता पंजाब'। हांलाकि पंजाब में यह समस्या ज्यादा गंभीर है परन्तु नशे की यह भयंकर बिमारी अब पंजाब तक सीमित न रहकर पूरे देश में आग की तरह फ़ैल गयी है, इसलिए इसका नाम 'उड़ता भारत' होता तो ज्यादा सटीक होता। हमारे भारतीय समाज में किसी भी प्रकार का नशा आपत्तिजनक रहा है। लेकिन अब तो नशों के भी इतने प्रकार प्रचलित हो गए हैं कि शराब जैसा नशा तो युवाओं के लिए छोटा - सा हो गया है। अफीम, चरस, हीरोइन जैसे खतरनाक नशे जिसकी एक बार लत लगने पर युवाओं की जवानी और जीवन पूरा बर्बाद हो जाता है, आजकल देश के हर नुक्कड़ - चौराहों पर उपलब्ध है ।

कुछ दिन पहले हम पंजाब के भटिंडा जिले के एक कॉलेज के कार्यक्रम में गए हुए थे। कार्यक्रम के दौरान जब हम वहाँ के अध्यापकों से घुल-मिल गए तब हमें पता लगा कि कॉलेज में अधिकांश महिला अध्यापक ही थी जो काफी उम्र की होते हुए भी शादीशुदा नहीं थी। कारण जानने पर ज्ञात हुआ कि उनको कोई सुयोग्य लड़के नहीं मिल पा रहे हैं क्योंकि यहाँ के अधिकांश लड़के नशे की लत में पड़ चुके हैं। एक सर्वे के अनुसार पंजाब के हर 4 में से 3 युवा, अथवा कहें तो लगभग हर घर में कोई न कोई इस महामारी का शिकार है। नशे में व्यक्ति स्वयं पर संयम नहीं रख पाता और यह विभिन्न अपराधों का मूल कारण बनता है। वर्ष 2014 में मुम्बई में ड्रग्स के नशे के आदि एक व्यक्ति ने 10-12 वर्ष की तक़रीबन 15 लड़कियों का योन शोषण किया। नशे की समस्या इतनी विकराल है कि ना सिर्फ व्यक्ति को बल्कि परिवार, समाज और देश को भी खा जाती है। वीरों की इस महान भूमि में जहाँ गुरु गोविन्द सिंह जी ने सवा लाख से एक को लड़ने के लिए सक्षम बनाया था, आपको क्या लगता है, नशे में धुत्त ये नौजवान क्या सवा लाख मिलकर भी देश और धर्म की रक्षा के लिए किसी एक दुश्मन का भी सामना कर पाएंगे? तो नशे का यह सवाल व्यक्तिगत नहीं है अपितु हमारे देश और समाज के भविष्य के लिए एक बड़ा खतरा है।

कोई भी नेता, पार्टी, सरकार इस पर काबू नहीं कर पा रही है। सवाल उठता है कि वे कौन लोग हैं या कौन सी ताकतें हैं जो भारत को नशे की लत से बर्बाद करना चाहती है। इसको समझने के लिए थोड़ा इतिहास खोजते हैं।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी, जो भारत में विभिन्न प्रकार के उत्पाद लेकर आई उसमे से एक था अफीम। इस अफीम को भारत के रास्ते से चीन पहुँचाया जाता था। सन 1830 में चीन 33% हिस्सेदारी के साथ दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन चुकी थी क्योंकि भारत की अर्थव्यस्था जो सन 1700 में सबसे बड़ी थी
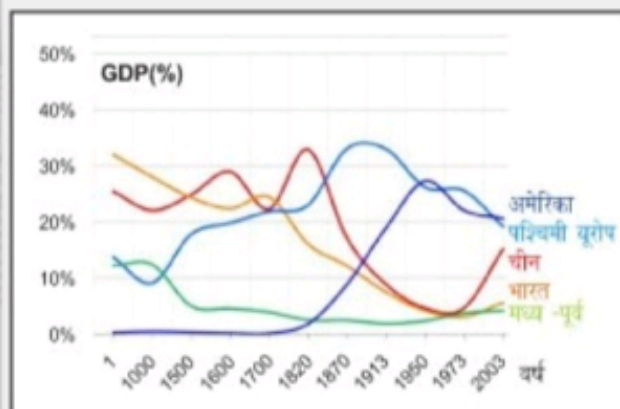
उसको अंग्रेजों ने तोड़ दिया था और अब अंग्रेजों की निगाह चीन पर थी। उसे बर्बाद करने के लिए **ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने भारत के रास्ते से चीन में अफीम बेचना शुरू किया जिससे देखते-देखते चीन की अर्थव्यस्था कमजोर होने लगी क्योंकि वहाँ के लोग अब नशे की लत में थे। यह देखते हुए वहाँ के शासक ने अफीम के व्यापार पर पाबन्दी लगाई जिसकी प्रतिक्रिया में इंग्लैण्ड ने चीन के साथ 1840 में युद्ध छेड़ दिया, जिसे अफीम युद्ध (Opium War) कहा जाता है और सन 1900 तक चीन की अर्थव्यस्था 33% से गिरकर दुनिया की अर्थव्यस्था की 10% मात्र रह गयी।**

इस तरह से चीन के बाद दुनिया के कई देशों को इस जाल में फंसा लिया जिसमें इंडोनेशिया, वियतनाम, थाईलैंड, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका महाद्वीप के अधिकाँश देश शामिल हैं। भारत में क्योंकि समाज काफी मजबूत था और नशे को लेकर सतर्क भी इन लोगों के कुचक्र में नहीं फँसा। परन्तु जैसे- जैसे लोगों ने आज़ादी के नाम पर पश्चिमी संस्कृति का अनुकरण किया वैसे ही भारत में भी इसकी जड़ें जमती चली गई। ये लोग स्कूल, कॉलेज और यूनिवर्सिटी जैसी जगहों को अपना अड्डा बनाते हैं जहाँ माता-पिता की देखरेख बिना नासमझ नौजवान इसका शिकार बन जाते है। एक सर्वे के अनुसार दिल्ली के **36%** स्कूली बच्चे पार्टी में ड्रग्स लेते हैं। दिल्ली और मुम्बई जैसे बड़े शहरों में तो लड़कियाँ लड़कों से भी आगे हैं।

भारत में ऐसे ड्रग्स का नशा प्रतिबंदित है, तो प्रश्न यह उठता है कि इतना मजबूत प्रशासन, पुलिस, एंटी-नारकोटिक्स (ड्रग्स विरोधी) विभाग होते हुए भी पंजाब के घर - घर तक और पूरे देश के लगभग सभी शहरों में यह मिलता कैसे है और यह आता कहाँ से है?
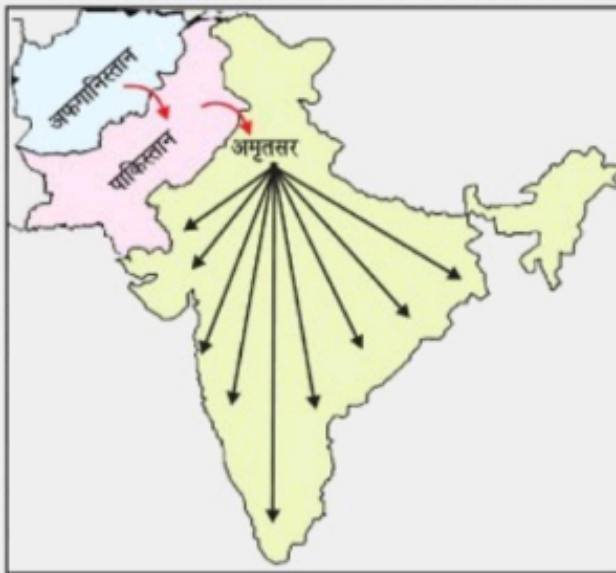
मुम्बई के एंटी- नारकोटिक्स विभाग के एक वरिष्ठ अधिकारी से बात हुई तो नाम गुप्त रखने की शर्त पर उन्होंने बताया कि देश की सारी अफीम अफ़ग़ानिस्तान में पैदा होती है जोकि पाकिस्तान के रास्ते पंजाब के अमृतसर तक पहुँचाई जाती है, जिसके बाद पूरे देश में इसका वितरण होता है और इस रैकेट में प्रशासन, पुलिस, फ़िल्मी सितारे और देश के कुछ बड़े नेता भी पूरी तरह से शामिल हैं। पंजाब और इससे सटे हरियाणा के लोगो ने बताया कि आपको अफीम कहीं और ना मिले तो कुछ पुलिस थानों में जाकर ले लेना।

1980 से पहले जब अफगानिस्तान में रूस का शासन था तब वहाँ कोई अफीम पैदा नहीं होती थी। अमेरिका की मदद से अफगानिस्तान में रूस से आज़ादी की लड़ाई तो छिड़ गयी पर अमेरिका के हस्तक्षेप के बाद 1986 में अफगानिस्तान दुनिया की 40 प्रतिशत

अफगानिस्तान में अफीम के खेतों की सुरक्षा में अमेरिकी सैनिक

अफीम पैदा करने लगा और 1999 तक दुनिया की 80 प्रतिशत अफीम वहाँ पैदा होने लगी थी। 1996 में तालिबान सत्ता में आया और सन 2000 में अफीम के खेतों में आग लगा दी। अफीम का उत्पादन जो हर साल 3000 टन से ज्यादा होता था, 94 फीसद गिरकर 185 टन से भी कम रह गया। इस अफीम के काले धंधे में अमेरिका के बड़े बैंक घरानों और नेताओं की हिस्सेदारी थी जिससे हर साल उनका लगभग 500 बिलियन डालर का फायदा हो रहा था। अब उनके पास कोई रास्ता नहीं बचा था और आतंकवाद का नाम लेकर वो अफगानिस्तान में घुस गए। अब अफगानिस्तान अफीम के उत्पादन के नए रिकार्ड कायम कर रहा है क्योंकि दुनिया की 90 प्रतिशत से भी ज्यादा अफीम अब वहाँ होती है।

रोड्रिगो दुतेर्ते

ऐसे ही फिलिपिन्स देश के लोगों को भी ड्रग्स के नशे का आदि बना लिया गया था। तो हाल ही में रोड्रिगो दुतेर्ते वहाँ के राष्ट्रपति बनें जिन्होनें लोगों से वायदा किया था कि राष्ट्रपति बनने के 6 महीने के भीतर वो ड्रग्स की समस्या खत्म कर देंगे। जून 2016 में राष्ट्रपति बनने के बाद उसने एक सख्त अभियान छेड़ा और वहाँ के प्रशासन ने 3000 से ज्यादा ड्रग्स तस्करों को मार गिराया। इसके बाद अमेरिका खलबला गया और अब उन पर मानवाधिकार के उल्लंघन के आरोप लगाये जा रहे हैं। अमेरिका के राष्ट्रपति ओबामा ने फिलिपींस का दौरा रद्द कर दिया। जबकि असलियत यह है कि अमेरिका के संगठन फिलिपींस में मानवाधिकार की आड़ में ड्रग्स के तस्करों को बचाना चाहते हैं।

भारत में भी ड्रग्स के विरुद्ध युद्ध छेड़ने का मतलब है दुनिया के सबसे शक्तिशाली राष्ट्र अमेरिका और उसके सबसे बदमाश लोगों से पंगा लेना और ऐसे में जबकि भारत के सभी नेता अमेरिका को आदर्श मानते हैं और अपने चुनाव अभियान के लिए इन्ही लोगों पर निर्भर रहते हैं तो क्या इनसे बदलाव की उम्मीद की जा सकती है? क्या किसी भी नेता में इतना दम है कि अमेरिका के विरुद्ध जाकर नशे के आतंकवाद से देश की रक्षा कर सकें?

अब समाधान तो बस इतना ही दिखता है कि सब मिलकर देश में एक जाग्रति अभियान चलाएं और समाज को सशक्त बनाकर नशे के इस आतंक पर जोरदार हमला बोल दें। नहीं तो यह आतंकवाद हमें कितना नुकसान पंहुचाएगा हम अंदाजा भी नहीं लगा सकते।

प्रताप चौधरी

भारतीय परिवार

आज आदमी - आदमी से भयभीत है, परिवार - समाज से भयभीत है, वातावरण - प्रदूषण से भयभीत है सवाल उठता है क्यों?

विकास शब्द की परिभाषा क्या है? प्रकृति से संस्कृति की तरफ जाना तो विकास है, लेकिन विकृति की तरफ जाना भी विकास है क्या? पोषक बनना तो विकास है, पर शोषक बनना भी विकास है क्या? पूरक, सहयोगी, दयावान, करुणावान, प्रज्ञावान बनना तो विकास है, परन्तु छीनना, लूटना, उत्पीड़ित व आतंकित करना, हिंसक व संवेदनहीन बनना भी विकास है क्या? प्राकृतिक सम्पदा का सदुपयोग करना तो विकास है परन्तु अतिभोग द्वारा संसाधनों का दुरूपयोग करना भी विकास है क्या? खासतौर पर, मानसिक तनाव का बढ़ना भी विकास है क्या?

आज करोड़ों लोगों से धरती, पानी, हवा, कुदरत की अनमोल चीज़ें भी छिनती जा रही हैं। हम पूछना चाहते हैं क्यों बना रहे हो ऐसी व्यवस्था जिसमें गिनती के लोगों के हाथ में सारे साधन-सम्पत्ति आ जाए व करोड़ों लोग मूल आवश्यकता के लिए भी तड़पें, पशु से भी बदतर जीवन जीने के लिए मजबूर हों? आखिर क्यों?

क्या इसे ही विकास कहते हैं? क्या इसे ही लोकतंत्र (लोगों का, लोगों के लिए, लोगों के द्वारा शासन) कहते हैं? क्या इसके लिए ही अनेक वैज्ञानिकों ने अपनी ज़िन्दगी को दाँव पर लगाया? क्या इसी के लिए शहीदों ने कुर्बानियाँ दी? क्या इसी के लिए हमने आज़ादी पाई थी?

जहाँ तक मैं समझता हूँ, शहीदों व महापुरुषों ने कहा था कि आज़ादी का मतलब है कि एक ऐसी व्यवस्था

का बनना जिसमें अन्तिम व्यक्ति को जीवन की मूल आवश्यकताएँ सम्मान के साथ मिलेंगीं तथा हर व्यक्ति को मानव के रूप में गरीमापूर्ण जीवन जीने का अवसर उपलब्ध होगा।

पर्यावरण का संकट पूरी सभ्यता के लिए खतरा बन गया है। क्या इससे कोई बचेगा? विज्ञान व तकनीकी का मकसद तो व्यक्ति को सहयोग देना व सुखी करना था पर नासमझी के कारण इसकी जगह बन गए आतंक के अड्डे! स्थूल हिंसा करने वाले तो जब आएँगे, तब आएँगे, शरीर तो एक दिन मरेगा ही, परन्तु यहाँ तो व्यक्ति पल-पल मर रहा है। मानसिक हिंसा हर पल हो रही है। उसमें व्यक्ति / परिवार / समाज सब कुछ छिनता जा रहा है, साथ ही कुदरत की अनमोल देन हवा, पानी, धरती भी छिन रही है। क्या यही है विकास?

जगह-जगह लिखा होता है कि किसी पर विश्वास न करें, अपने आस-पास देख लो कहीं बम तो नहीं? ज़हरीली, नशीली वस्तु तो खाने में तो नहीं मिला दी? क्या हो गया व्यक्ति को? भाई का भाई पर, मित्र का मित्र पर, मरीज़ का डॉक्टर पर, छात्र का शिक्षक पर, फरियादी का वकील और जज पर, जनता का नेता पर, पिता का पुत्र पर... सभी पर अविश्वास है!

कुल मिलाकर आदमी का आदमी, परिवार, समाज व प्रकृति पर अविश्वास! और हम कहे जा रहे हैं विकास चाहिए।

अरे भाई, कैसा विकास? जिस विकास की दौड़ में आदमी ही नहीं बचा, विश्वास ही नहीं बचा, तो विकास का क्या मतलब मित्रों?

कहीं यह विकास की दौड़ एकतरफा तो नहीं हो गई, अधूरी तो नहीं है। मैं कौन? मेरा प्रयोजन क्या और मेरी भूमिका क्या? इसका उत्तर पाए बिना कहीं यह विकास की दौड़ आदमी के लिए भस्मासुर न बन जाए। देख लो देश से लेकर दुनिया तक, परिवार से लेकर समाज तक कितना भय व तनाव है, कितना ड़रा हुआ है आदमी आदमी से।

इसलिए विकास की बात करते समय क्या हमें इन बिन्दुओं पर नहीं सोचना चाहिए? लेकिन कहीं पर भी इसकी चर्चा नहीं है।

गलती से किसी युवा के अन्दर यह सवाल उठ जाए कि मैं कौन हूँ? मेरा प्रयोजन क्या? मेरी भूमिका क्या होनी चाहिए....? तो माता-पिता को डर लगने लगता है कि कहीं बच्चा रास्ता तो नहीं भटक गया?

सबको एक ही विकास पता है कि अधिक से अधिक साधन कैसे प्राप्त हों, बैंक-बैलेंस कैसे बढ़े? कितना बढ़े और क्यों बढ़े, यह नहीं मालूम, बस बढ़ना चाहिए।

ज्ञानी, विज्ञानी, अज्ञानी तीनों खड़े हैं इस विकास की लाइन में, फिर बताओ तनाव, भय, युद्ध, आतंक व हिंसा होगी या नहीं? कौन रोकेगा इसे?

मैं पूछता हूँ क्यों बनाई जा रही है ऐसी व्यवस्था जिसमें मुट्ठी भर लोग अरबपति से खरबपति बनते जा रहे हैं व करोड़ों लोगों से कुदरत की अनमोल चीज़ हवा और पानी तक भी छिनता जा रहा है। पानी खरीदकर पीना विकास है या विनाश?

क्यों सिमटती जा रही है सारी सम्पदा मुट्ठी भर लोगों के हाथों में? जबकि गाँधीजी, जिनका आज सब नाम लेते हैं, हिन्द स्वराज में कहते हैं कि पैसे का डंक साँप के डंक से ज्यादा ज़हरीला है। जब साँप काटता है तो हमारा शरीर लेकर हमें छोड़ देता है परन्तु जब पैसे की दौड़ डसती है तो वह शरीर के साथ-साथ विवेक, मन, आत्मा व सब कुछ ले लेने के बाद भी पीछा नहीं छोड़ती व आने वाली पीढ़ी की मानसिकता भी विकृत बना देती है।

जैसा कि आज हम चिकित्सा, न्यायालय, विद्यालय में देख सकते हैं कि मुट्ठी भर पूँजीपति वर्ग हवा, पानी, धरती जैसी कुदरत के अनमोल उपहार को भी ज़हरीला बनाने के बाद भी खुद को अपराधी नहीं मान रहा है। मैं पूछता हूँ कि हवा, पानी धरती को अनाज, फल, सब्ज़ी, दूध व समूचे पर्यावरण को किसने ज़हरीला बनाया? विकसित कहे जाने वाले लोगों ने या जिन्हें हम अविकसित कह रहे हैं उन्होंने?

विकास, जो हमें सुख व समृद्धि की तरफ ले जाने के लिए था, वही आज पल-पल मारने के लिए है, यह मानवता पर बोझ बन गया है।

शिक्षा, चिकित्सा, न्याय व चुनाव के आधुनिक तंत्र ने बाँट दिया आदमी को, मार दिया इन्होंने इन्सानियत को! बहुत पीछे छोड़ दिया इन्होंने इतिहास के ज़ालिमों को! क्योंकि पहले ज़ालिमों की मारने-काटने की एक सीमा थी। पर अब तो विज्ञान व तकनीक की वजह से - एक बटन दबाओ तो सब कुछ स्वाहा!

इसलिए मित्रों, सोचना होगा कि विकास क्या है? उसकी दशा व दिशा क्या होगी? तभी जाकर मानव जाति का प्रयोजन व भूमिका पूरी होगी। नहीं तो कहीं विकास की धुन में हम अनजाने में पृथ्वी का सर्वनाश न कर बैंठे।

\- सत्यप्रकाश भारत
सामाजिक चिंतक

अमरीका के हॉवर्ड विश्वविद्यालय से लेकर भारत के दिल्ली विश्वविद्यालय और आई.आई.टी. तक में क्या कोई ऐसी शिक्षा दी जाती है कि छात्र की आँखों पर रूई रखकर पट्टी बाँध दी जाए और उसे प्रकाश की किरण भी न दिखाई दे, फिर भी वह सामने रखी हर पुस्तक को पढ़ सकता हो? है न चौंकाने वाली बात?

इसी भारत में किसी हिमालय की कन्दरा में नहीं, बल्कि गुजरात के महानगर अहमदाबाद में यह चमत्कार आज साक्षात हो रहा है। कुछ समय पहले मुझे इस चमत्कार को देखने का सुअवसर मिला। मेरे साथ अनेक वरिष्ठ लोग थे। हम सबको अहमदाबाद के हेमचन्द्राचार्य संस्कृत गुरुकुल में विद्यार्थियों की अद्भुत मेधा शाक्तियों का प्रदर्शन देखने के लिए बुलाया गया था। निमंत्रण देने वालों के ऐसे दावे पर यकीन नहीं हो रहा था। पर वे आश्वस्त थे कि अगर एक बार हम अहमदाबाद चले आएँ, तो हमारे सन्देह स्वतः दूर हो जाएँगे और वही हुआ भी।

छोटे-छोटे बच्चे इस गुरुकुल में आधुनिकता से कोसों दूर पारम्परिक गुरुकुल शिक्षा पा रहे हैं। पर उनकी मेधाशक्ति किसी भी महँगे पब्लिक स्कूल के बच्चों की मेधाशक्ति को बहुत पीछे छोड़ चुकी है।

आपको याद होगा पिछले दिनों सभी टी.वी. चैनलों में एक छोटा प्यारा बच्चा दिखाया गया था, जिसे "गूगल चाइल्ड" कहा गया। यह बच्चा स्टूडियो में हर सवाल के जवाब पलभर में देता था जबकि उसकी आयु 10 वर्ष से भी कम थी। दुनिया हैरान थी उसके ज्ञान को देखकर। पर, किसी टी.वी. चौनल ने यह नहीं बताया

मलखम करते गुरुकुल के विद्यार्थी

कि ऐसी योग्यता उसमें इसी गुरुकुल से आई है।

दूसरा नमूना उस बच्चे का है, जिसे आज दुनिया के इतिहास की कोई भी तारीख पूछो, तो वह सवाल खत्म होने से पहले उस तारीख को क्या दिन था, ये बता देता है। इतनी जल्दी तो कोई आधुनिक कम्प्यूटर भी जवाब नहीं दे पाता। तीसरा, एक बच्चा गणित के 50 मुश्किल सवाल मात्र ढाई मिनट में हल कर देता है। यह विश्व रिकॉर्ड है। ये सब बच्चे संस्कृत में वार्ता करते हैं। शास्त्रों का अध्ययन करते हैं, देसी गाय का दूध-घी खाते हैं। बाज़ारू सामानों से बचकर रहते हैं। यथासम्भव प्राकृतिक जीवन जीते हैं और घुड़सवारी, ज्योतिष, शास्त्रीय संगीत, चित्रकला आदि विषयों का इन्हें अध्ययन कराया जाता है।

इस गुरुकुल में मात्र 100 बच्चे हैं। पर इन बच्चों को पढ़ाने के लिए 300 शिक्षक हैं। यह सब शिक्षक वैदिक पद्धति से पढ़ाते हैं। बच्चों की अभिरुचि के अनुसार उनका पाठक्रम तय किया जाता है। परीक्षा की कोई निर्धारित पद्धति नहीं है। पढ़कर निकलने के बाद कोई डिग्री भी नहीं मिलती। यहाँ पढ़ने वाले ज्यादातर बच्चे 15-16 वर्ष से कम आयु के हैं और लगभग सभी बच्चे अत्यन्त सम्पन्न परिवारों से हैं। इसलिए उन्हें नौकरी की चिन्ता भी नहीं है। पढ़ाई पूरी करने के बाद उन्हें घर के लम्बे-चौड़े कारोबार सम्हालने हैं।

वैसे भी डिग्री लेने वालों को नौकरी कहाँ मिल रही है? एक चपरासी की नौकरी के लिए 3-4 लाख पोस्ट ग्रेजुएट लोग आवेदन करते हैं। ये डिग्रियाँ तो अपना महत्व बहुत पहले खो चुकी हैं। इसलिए इस गुरुकुल के संस्थापक उत्तम भाई ने यह फैसला किया है कि उन्हें योग्य, संस्कारवान, मेधावी व देशभक्त युवा तैयार करने हैं, जो जिस भी क्षेत्र में जाएँ, अपनी योग्यता का लोहा मनवा दें और आज यह हो रहा है। दर्शक इन बच्चों की बहुआयामी प्रतिभाओं को देखकर दाँतों तले अँगुली दबा लेते हैं।

खुद डिग्रीविहीन उत्तम भाई का कहना है कि उन्होंने सारा ज्ञान स्वाध्याय और अनुभव से अर्जित किया है। उन्हें लगा कि भारत की मौजूदा शिक्षा प्रणाली, जो कि

मैकाले की देन है, भारत को गुलाम बनाने के लिए लागू की गई है। इसीलिए भारत गुलाम बना और आज तक बना हुआ है। इस गुलामी की ज़ंजीरें तब टूटेंगी जब भारत का हर युवा प्राचीन गुरुकुल परम्परा से पढ़कर अपनी संस्कृति और अपनी परम्पराओं पर गर्व करेगा। तब भारत फिर से विश्वगुरू बनेगा, आज की तरह कंगाल नहीं।
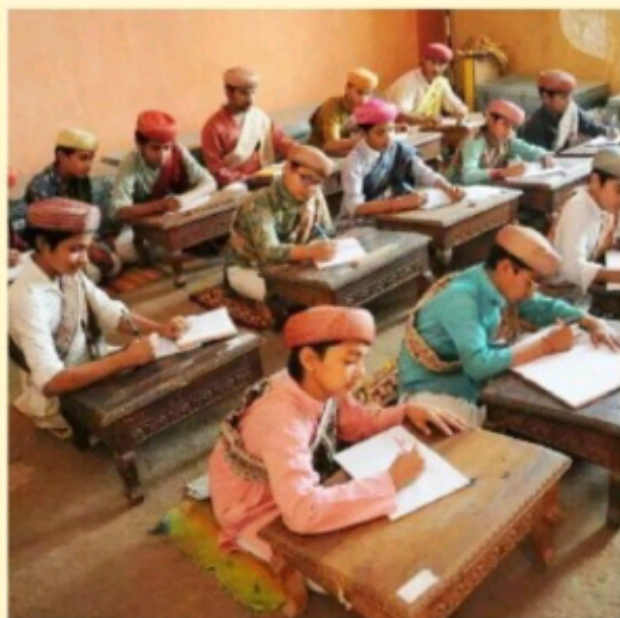
उत्तम भाई चुनौती देते हैं कि भारत के 100 सबसे साधारण बच्चों को छाँट लिया जाए और 10-10 की टोली बनाकर दुनिया के 10 सर्वश्रेष्ठ विद्यालयों में भेज दिया जाए। 10 छात्र उन्हें भी दे दिए जाएँ। साल के आखिर में मुकाबला हो। उत्तम भाई के गुरुकुल के बच्चे शेष दुनिया के सर्वश्रेष्ठ बच्चों के मुकाबले कई गुना ज्यादा मेधावी न हों, तो उनकी गर्दन काट की जाए और अगर ये बच्चे सबसे ज्यादा मेधावी निकलें, तो भारत सरकार को चाहिए कि वह गुलाम बनाने वाले इन सब स्कूलों को बन्द कर दे और बैदिक पद्धति से चलने वाले गुरुकुलों की स्थापना करे।

उत्तमभाई जवानमलजी शाह, कुलपति-गुरुकुलम्

उत्तम भाई और उनके अन्य साथियों के पास देश को सुखी और समृद्ध बनाने के ऐसे ही अनेक कालजयी प्रस्ताव हैं जिन्हें अपने-अपने स्तर पर प्रयोग करके सिद्ध किया जा चुका है। पर, उन्हें चिन्ता है कि आधुनिक मीडिया, लोकतंत्र की नौटंकी, न्यायपालिका का आडम्बर और तथाकथित आधुनिक शिक्षा इस विचार को पनपने नहीं देंगे। क्योंकि ये सारे ढाँचे औपनिवेशिक भारत को झूठी आज़ादी देकर गुलाम बनाए रखने के लिए स्थापित किए गए थे।

पर वे यह देखकर उत्साहित हैं कि हम जैसे अनेक लोग, जो उनके गुरुकुल को देखकर आ रहे हैं, उन सबका विश्वास ऐसे विचारों की तरफ दृढ़ होता जा रहा है कि समय की देर है, कभी भी ज्वालामुखी फट सकता है।

- विनीत नारायण

वरिष्ठ पत्रकार

काले धन का सफ़ेद सच

भारत सरकार ने एक फतवा जारी किया है कि 500 और 1000 रूपये के नोट 9 नवम्बर 2016 से बाज़ार में नहीं चलेंगे और इसके पीछे एक अजीबो - गरीब कारण दिया है कि इससे देश का काला धन बाहर आएगा और देश की तरक्की होगी जिसका फायदा देश के आम लोगों को मिलेगा। भारत सरकार एक और कुतर्क दे रही है कि 500 और 1000 के नोट बंद करने से भ्रष्टाचार पर काबू मिलेगा लेकिन अपनी ही बात के विरोधाभास में जाकर 1000 की जगह अब 2000 के नोट जारी करेगी। प्रधानमंत्री जी के इस सुनहरे निर्णय को अजीबो गरीब फतवा कहना उन देशभक्तों की भावनाओं को ठेस पहुँचा सकता है, जिनको लगता है कि यह ऐतिहासिक फैसला देश को नई ऊँचाईयों तक ले जाएगा। किन्तु मेरा तो धर्म बनता है कि देशहित में इस घटना के दूसरे पहलुओं पर भी दृष्टि डाली जाए जिससे देश के लोग इस विषय का एक बेहतरीन मूल्यांकन कर सकें। भारतीय इतिहास में एक नाम बहुत प्रसिद्ध हुआ 'मोहम्मद बिन तुग़लक़'। हमारे वर्तमान प्रधानमंत्री जी की तरह ही उसको भी बिना सोचे - विचारे ऐतिहासिक और क्रांतिकारी फैसले लेने की आदत थी। उसने एक बार चमड़े के सिक्के चालू कर दिए। फिर क्या था , लोग अपने घर में ही चमड़े के सिके बनाने लगे और उसका ये निर्णय उसके जीवन की सबसे बड़ी भूल साबित हुई। प्रधानमंत्री जी का यह निर्णय क्रांतिकारी जरूर लग रहा है पर इसका अगर सही मूल्यांकन नहीं किया तो उनकी यह भूल देश को बड़ी महँगी पड़ेगी।

भारत में प्राचीन काल से ही धन को छुपा कर रखने की एक परंपरा चली आ रही है जिसका बर्णन चाणक्य ने अपने शास्त्रों में भी किया है क्योंकि चोर और दुष्ट शासक हमेशा आपके धन के दुश्मन होते हैं। भारतीय राजा उत्पादन का अधिकतम 1/6 ही कर के रूप में लेते थे जिससे भारत के लोग इतने समृद्ध और ईमानदार थे कि अपनी आय का 80% तक दान दिया करते थे। कुछ लोग तो सर्वस्व दान कर देते थे और फिर से अपना व्यापार खड़ा कर लेते थे। जब धोखे से अंग्रेज भारत के शासन पर काबिज हुए तब हमारा देश दुनिया का सबसे समृद्ध देश था और यहाँ कोई भी

गरीब नहीं था जिसका वर्णन अंग्रेजों ने भी किया है। भारत को आर्थिक गुलामी में धकेलने के लिए अंग्रेजों ने एक षड्यंत्रकारी नीति बनाई जिसके तहत भारत के लोगों पर अत्याधिक टैक्स लगाया जिसमें आयकर 97% तक कर दिया गया था। इसके मुकाबले अंग्रेजी कंपनियों पर बहुत कम टैक्स था जिससे भारत में इन विदेशी कंपनियों का व्यापार बहुत तेजी से फैलने लगा और भारत के तमाम उद्योग और व्यापार नष्ट हो गए। और जिन लोगों ने ईमानदारी से कमाए हुए अपने इस धन को इन डाकुओं से बचा कर रखा, पता चलने पर अंग्रेजी सरकार उन्हें ठीक आज की तरह न सिर्फ दण्डित करती थी बल्कि समाज की नजर में उन्हें चोर भी घोषित कर देती थी। दुष्ट शासकों से छुपाये गए इस धन को कालधन कहा जाने लगा। भारत को बर्बाद करने और विदेशी कंपनियों को स्थापित करने के लिए गोरे अंग्रेजों द्वारा बनाया गया ये टैक्स का ढांचा काले अंग्रेजों ने भी यथावत रखा, जिसमें 64 प्रकार के टैक्स भारत के लोगों पर लगाए जाते हैं। और इसी टैक्स के ढांचे की वजह से देश में दिन - प्रतिदिन गरीबी, महँगाई, भ्रष्टाचार, लूट खसोट इत्यादि बढ़ती जा रही है।

इसी तरह रूस के लोग व्यापार के मामले में जब इन लोगों को चुनौती देने लगे थे तो कम्युनिस्ट क्रान्ति के नाम पर लेनिन, ट्रोट्स्की इत्यादि को मदद कर लोगों की सम्पति को राज्य के अधीन करा दिया और राज्य पर इन्हीं का नियंत्रण रहा। भारत के लोगों ने यहाँ न तो साम्यवादी क्रान्ति होने दी और न ही अंग्रेजो द्वारा अपनी सारी संपत्ति लुटने दी। परंतु अंग्रेजो द्वारा बनाई गई बैंकों के आधार पर खड़ी, यह शोषणकारी व्यवस्था प्रतिवर्ष सरकार और जनता को अत्याधिक ब्याज और टैक्स के बोझ तले दबाकर आर्थिक गुलामी में फंसा रही है। जिससे न सिर्फ विश्व व्यापार के मामलों में हम कमजोर बनते जा रहे हैं बल्कि टैक्स का 60% हिस्सा बैंकों के माध्यम से इन्हें विदेशी दुश्मनों को चला जाता है। इसके लिए आप 'बैंकों का मायाजाल' पुस्तक पढ़े तो ज्यादा अच्छे तरीके से आपको समझ में आएगा।

2008 में भारत के कालेधन के आंकड़े बाहर लाना दरअसल वर्ल्डबैंक और आई.एम.एफ. का ही एक षडयंत्र था। दुनिया को नियंत्रित करने वाले अंतराष्ट्रीय बैंकरो ने जब 2008 में विश्वस्तर पर मंदी लाने की कोशिश की तो अमेरिका तो इसकी चपेट में आ गया था पर भारत में गुप्त धन होने से हम इस मंदी से अछूते रहे। यह बात दुनिया के शासकों को पसंद नहीं आई और उन्होंने कालेधन का मुद्दा छिड़वा दिया। वो लोगों के गुप्त धन को बाहर निकालना चाहते थे ताकि उनकी बहुराष्ट्रीय कंपनियों का मुकाबला करने वाला कोई बचे ही नहीं। पहले जन-धन योजना से बैंकों में खाते खुलवाना और अब सभी को बैंकों पर आश्रित करना उनकी एक सोची - समझी रणनीति है। अब भारत में मंदी और महँगाई के माध्यम से लोगों को

नियंत्रित करना और आसान हो जाएगा क्योंकि अब इनको हर भारतीय की क्षमता पता चल जाएगी कि किसके पास, किस शहर में, लगभग कितना धन है। दूसरा, लोगों के पास जो भी सोना - चाँदी इत्यादि रखा है उसको भी लूटने की तैयारी इनके द्वारा चल रही है ये लोग पहले भी गोल्ड मोनेटाइजेशन स्कीम के जरिए एक बार कोशिश कर चुके पर असफल रहे लेकिन जल्द ही ये किसी ना किसी तरीके से देश के लोगों का सारा सोना - चाँदी भी निकलवा लेंगे साथ ही आने वाले समय में लोगों का सारा पैसा डिजिटल करके आधार कार्ड से जोड़ दिया जाएगा और कागज़ के नोट ही खत्म कर दिए जाएंगे। उस दिन भारत की गुलामी पक्की हो जायेगी और ये विदेशी ताकतें सदा - सदा के लिए भारत पर शासन स्थापित कर लेगी। फिर जो कोई देशभक्त इन विदेशी जालिमों के विरुद्ध आवाज उठाएगा, उसका आर्थिक बहिष्कार कर दिया जाएगा। जिन लोगों की सांठगांठ दुनिया के इन शासकों से है , उनके लिए तो भारत सरकार हर साल लाखों करोड़ रूपये की कर में छूट देती है और दूसरी तरफ भारत के मध्यमवर्गीय व्यापारियों को टैक्स न देने पर चोर कहती है। और तो और हमारे टैक्स का 60% पैसा सरकार दुनिया के इन्हें शासकों को दे देती है , तो फिर हम क्यों टैक्स दें? इसलिए मैं कहता हूँ कि सरकार को टैक्स देना देश का नुक्सान करना है। सांठगांठ वाले जिन लोगों का पैसा स्विस बैंक या अन्य किसी विदेशी बैंको में पड़ा हुआ है वो वापस आता तो देश का कुछ कल्याण होता पर मोदी जी के इस फैसले से उन लोगों पर कोई असर नहीं पड़ेगा। इससे तो सिर्फ मध्यमवर्गीय व्यापारियों का ही दमन होगा और उल्टा देश के लोगों का धन अब बैंकों के जरिये विदेशियों का हो जाना है। आपको यह बात अटपटी लग सकती है पर भविष्य में आप एकदिन इस बात को जरूर

समझेंगे, पर डर है तब तक कहीं देर न हो जाए। इसलिए मैं बहुत दुखी हूँ कि अपने इस महान देश का पतन अपनी आँखों के सामने देख रहा हूँ।

मैं मोदी जी के इस एलान का भी जरूर समर्थन करता अगर वो साथ में यह एलान भी करते कि देश के पैसे भारत सरकार ही बनाएगी, बैंक नहीं, जिससे सरकार को अपने बजट का 60% हिस्सा (लगभग 7 लाख करोड़ रुपया) बैंको को नहीं देना पड़ता और देश का पैसा देश में ही रहता। इससे न सिर्फ भारत में टैक्स दर इतनी कम हो सकती है कि कालाधन कोई नहीं रह जाए बल्कि देश को एफ.डी.आई. के माध्यम से विदेशी कंपनियों को बेचना भी नहीं पड़ता। आर.बी.आई. के आँकड़ों के अनुसार भारत में हर साल लगभग 1000 लाख करोड़ रूपये का डेरिवेटिव मार्किट मे जुआ खेला जाता है। ये सारा पैसा इन्ही शासकों का है इसीलिए सरकार इनसे तो कोई हिसाब नहीं मांगती। अगर सरकार इसपर 2% ही टैक्स लगा दे तो हर साल 20 लाख करोड़ रूपये की आमदनी हो सकती है, फिर अन्य किसी टैक्स की जरूरत ही नहीं होगी। यदि सरकार ऐसा करती तो भारत के तमाम उद्योग - धंधे पनपते और भारत पहले की तरह एक उद्योग - प्रधान देश बनकर सोने की चिड़िया कहलाता और विश्वगुरु बनकर स्थापित होता।

सरकार के इस फरमान से आने वाले कुछ महीनों तक देश के लोगों को दैनिक लेन - देन की प्रक्रिया में बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा और देश में एक मंदी का माहौल बना रहेगा। अगर देश हित में लोग थोड़े - बहुत परेशान हो भी जाते तो कोई बात नहीं थी पर इस तुगलकी फरमान को झेलना तो शायद मूर्खता होगी। आज बैंकों की व्यवस्था एक ऐसे नाजुक दौर से गुजर रही है कि कभी भी ध्वस्त हो सकती है और भारतीय रिजर्व बैंक भी मात्र एक लाख रूपये की गारंटी देता है। जिस तरह से सरकार ने 500 और 1000 के नोटों को रातो - रात बंद करने का निर्णय लिया, मुझे पूरा विश्वास है किसी दिन बैंकों के फेल हो जाने पर आपके सारे खाते जब्त कर लिए जाएंगे और इसे भी देश हित में क्रान्तिकारी निर्णय घोषित कर दिया जाएगा।

- अंकित यादव

भारतीय परिवार

मुल्क ने रोशनी की एक किरण माँगी थी।
निज़ाम ने हुक्म दिया है कि आग लगा दी जाए।।

राजा चुन कर तुम्हीं ने भेजा। तुम्हीं भरो हरजाना जी

आपको शायद इस बात का गर्व हो कि आपके पास वोट देने का अधिकार है। शायद इस बात का भी गर्व हो कि आप अपने वोट के जरिए सरकार बदल सकते हैं।

लोकतंत्र के नाम पर आपको पिछले 70 सालों से यह अहसास कराया जा रहा है कि आपकी भी इस देश में कोई हैसियत है।

हकीकत यह है कि आपको अब तक जानबूझ कर एक मायावी दुनिया के मुगालतों में बन्धक बनाकर रखा गया है। पाँच साल में एक दिन आपकी आवभगत शहंशाह की तरह की जाती है। वोट देने के बाद शहंशाह के कपड़े उतार दिए जाते हैं। एक बार फिर आपको बेबस और लाचार आदमी की ज़िन्दगी जीने के लिए किस्मत के भरोसे छोड़ दिया जाता है। लोकतंत्र के नाम पर चलने वाला यह दर्दनाक और बेरहम सीरियल कभी खत्म नहीं होता, हर पाँच साल में निर्माता, निर्देशक और फनकार बदल जाते हैं। अवाम की रुलाई और धुनाई बदस्तूर जारी रहती है।

आखिर, वोट देकर आप हासिल क्या करते हैं? एक बेहतर ज़िन्दगी के सपने तो बहुत दूर की बात रही, ज़िन्दा रहने की न्यूनतम ज़रूरतों के लिए भी आपको हाथ में कटोरा लेकर खड़ा रहना पड़ता है। आप भीख

माँगने के लिए तैयार हैं, लेकिन जिन लोगों को आपने वोट दिया है, उनके पास आपको भीख देने के लिए भी समय नहीं है। उनका सारा समय और ऊर्जा अपने मालिक के लिए समर्पित है।

अक्सर यह तर्क दिया जाता है कि आपने वोट नहीं दिया, तो गलत आदमी संसद या विधानसभा में जाएगा। इस देश के भोले-भाले और गरीब आदमी के साथ कब तक छल किया जाता रहेगा? जब चुनाव एक चोर और लुटेरे के बीच करना है तो वोट देने या नहीं दने क्या फर्क पड़ता है? वज़ीर कोई भी बने पढ़े-लिखे नौजवानों को तो एक अदद नौकरी लिए दर-दर भटकना ही है।

ऐसा भी नहीं है कि कोई नया प्रयोग करना बाकी है। हमने इन 70 सालों में सभी रंग, नारे और परचम वाले राजनीतिक दल को आज़माकर देख लिया है। एक भी राजनैतिक पार्टी ऐसी नहीं बची, जिसे सत्ता पर हमने काबिज़ न किया हो। लेबल बदला - लूट का सिलसिला नहीं बदला, चेहरे बदले - जुल्म और शोषण का रवैया नहीं बदला!

बड़े फक्र के साथ कहा जाता है कि भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। बड़ा है तो सबको रोज़ी-रोटी मिलनी चाहिए थी। अगर ऐसा नहीं हो सका है तो लोकतंत्र का महिमा-मण्डन, गुणगान जनता के समक्ष फरेब है। ऐसा लोकतंत्र हमारे किस काम का जो बहन-बेटियों को इज्जत से जीने का अवसर देने में नाकाम है।

वॉल मार्ट और विदेश कम्पनियों के रिटेल बाज़ार में

निवेश करने के मुद्दे पर एक पत्रकार ने अण्णा हजारे से सवाल किया, तो उन्होंने कहा - "वे सेवा करने नहीं आ रहे हैं, वे मेवा खाने आ रहे हैं।"

यही बात हमारे राजनेताओं पर भी लागू होती है। चुनाव उनके लिए व्यवसाय है। सिर्फ व्यवसाय, व्यवसाय के अलावा और कुछ भी नहीं।

अगर ऐसा नहीं है, तो महलों में रहने वाले लोग चिलचिलाती हुई धूप में, ऊबड़-खाबड़ सड़कों पर रोड शो और रथ-यात्राओं में अपना पसीना क्यों बहा रहे हैं? जात-पात और मज़हब के नाम पर लोगों को बाँटने का काम क्यों कर रहे हैं? ज़ाहिर है कि जो चुनाव में जीतेगा, दस प्रतिशत कमीशन उसे मिलेगा। अय्याशियाँ उसके खाते में जाएँगी। जुल्म करने की ताकत मिलेगी।

जब सब-कुछ लोकतांत्रिक प्रक्रिया के तहत हो, जनता की मंजूरी से ही और चुनाव के मार्फत हो। इसीलिए आपसे कहा जाता है कि संविधान ने आपको बहुत बड़ी ताकत दी है - आपको वोट देने का अधिकार दिया है!

आज के माहौल पर एक गीत की ये पंक्तियाँ कितनी मौजूद हैं -

नहीं लिखा तकदीर में तेरे,
एक वक्त का खाना जी।
राजा चुनकर तुम्हीं ने भेजा,
तुम्हीं भरो हर्जाना जी।
रोजी, रोटी, बिजली, पानी
इनका नहीं ठिकाना जी।
अपनी जेबें हरदम खाली,
उनके पास खज़ाना जी।

जो व्यवस्था अमीर को और ज्यादा अमीर तथा गरीब को और ज्यादा गरीब बना रही है, उसे रद्द करने का समय आ गया है। मौजूदा चुनाव प्रक्रिया से जिस लोकतंत्र का ताना-बाना बुना गया है, वह महज पैसे से सत्ता और सत्ता से पैसा बनाने का खेल है।

वोट देने का अर्थ है - अपनी बरबादी पर दस्तखत करना। वोट देने का अर्थ है - अपनी बदहाली को कायम रखना।

अगर आपने अपनी मर्ज़ी से राजा चुना है तो हर्जाना भी आपको ही भरना पड़ेगा। मौजूदा जन-विरोधी चुनाव प्रक्रिया का बहिष्कार और तिरस्कार ज़रूरी है। वोट नहीं देने से यह तसल्ली तो हासिल की ही जा सकती है कि लुटेरों, गद्दारों और चोरों को चुनने में आप शामिल नहीं थे।

चुनाव प्रक्रिया को बदलने और सही लोकतंत्र के निर्माण का रास्ता यहीं से शुरू होता है।

- अक्षय जैन
लेखक, व्यंग्यकार

उन्हें हमेशा इसी का गुमान रहता है
उधार मांग कर भारत महान रहता है
जो भी पहुँचा संसद में, यही कहा उसने
हमारी जेब में हिन्दुस्तान रहता है।

सीधी बात!

'यह आजादी झूठी है' पत्रिका के भूमिका अंक के माध्यम से हमने अंधेरे में दिया जलाने की कोशिश की है और हिंसा व शोषण पर खड़ी वर्तमान व्यवस्था की गुलामी को स्पष्ट किया है। इससे व्यवस्था को समझने में आपकी दृष्टि काफी हद तक स्पष्ट हो गयी होगी। हमारी मासिक पत्रिका के माध्यम से इसको आगे और विस्तार से समझाया जायेगा। साथियो, देश के अधिकतर लोग वर्तमान व्यवस्था से दुःखी तो हैं, लेकिन संगठित न होने के कारण कुछ कर नहीं पा रहे हैं।

अब सीधी बात यह है कि परिवर्तन बिना किए तो होगा नहीं और बाहर से करने कोई आयेगा नहीं, तो कुल मिलाकर हमें ही कुछ करना होगा। बिना संगठन के बनाए तो लड़ाई जीतने से रहे और संगठन बनाने के लिए चाहिए संगठन में पूरा जीवन लगाने के लिए कुछ देशभक्त लोग।

अब देशभक्तों को भी अभियान को बढ़ाने के लिए चाहिए होंगे - साधन। देश की आजादी के लिए साधन जुटाने के दो रास्ते हैं। या तो भगतसिंह और उनके साथियों की तरह करें 'काकोरी जैसी लूट' और पकड़े जाने पर अभियान खत्म या फिर देश के प्रति लोग ही अपनी जिम्मेदारी समझें और देश की आजादी के लिए आर्थिक सहायता करें। दूसरा विकल्प ज्यादा सही लगता है क्योंकि इसमें अहिंसक तरीके से ताकत बनाकर जीत की ज्यादा संभावनाएँ हैं। और कोई रास्ता देश को आजाद कराने के लिए आपके पास हो तो जरुर बताएँ।

समय निकलता जा रहा है, अभी कुछ नहीं किया तो फिर बाद में बचाने के लिए कुछ नहीं बचेगा। अभी शुरूआत करेंगे तो ही पाँच-सात साल में एक संगठित ताकत बन पायेगी। अब फैसला आपके हाथ में है और आपको ही तय करना है कि आपका क्या योगदान रहेगा।

क्रान्तिकारियों का सपना पूरा करने और देश को आज़ाद कराने के लिए कुछ लोग तो पूरा जीवन हमारे साथ इसी कार्य के लिए समर्पित करें और बाकी सभी लोग

100☐ 200☐ 500☐ 1100☐

रु. महीने का योगदान अवश्य करें।

इंकलाब जिन्दाबाद

हमसे जुड़ने के लिए क्लिक करें

अभी ना पूछो हमसे मंजिल कहां है, अभी तो चलने का इरादा किया है।
ना हारे हैं ना हारेंगे कभी, ये किसी और से नहीं खुद से वायदा किया है।।

भारतीय परिवार
भारतीय परिवार
भारतीय परिवार
भारतीय परिवार
भारतीय परिवार
भारतीय परिवार

मैं तुम्हें एक ताबीज देता हूँ। जब भी दुविधा में हो, या जब अपना स्वार्थ तुम पर हावी हो जाए, तो इसका प्रयोग करो, उस सबसे गरीब और दुर्बल व्यक्ति का चेहरा याद करो जिसे तुमने कभी देखा हो, और अपने आप से पूछो–जो कदम मैं उठाने जा रहा हूँ वह क्या उस गरीब के कोई काम आएगा? क्या उसे इस कदम से कोई लाभ होगा? क्या इससे उसे अपने जीवन और अपनी नियति पर कोई काबू फिर मिलेगा? दूसरे शब्दों में, क्या यह कदम लाखों भूखों और आध्यात्मिक दरिद्रों को स्वराज देगा?

तब तुम पाओगे कि तुम्हारी सारी शंकाएं और स्वार्थ पिघल कर खत्म हो गए हैं।

मो.क.गांधी
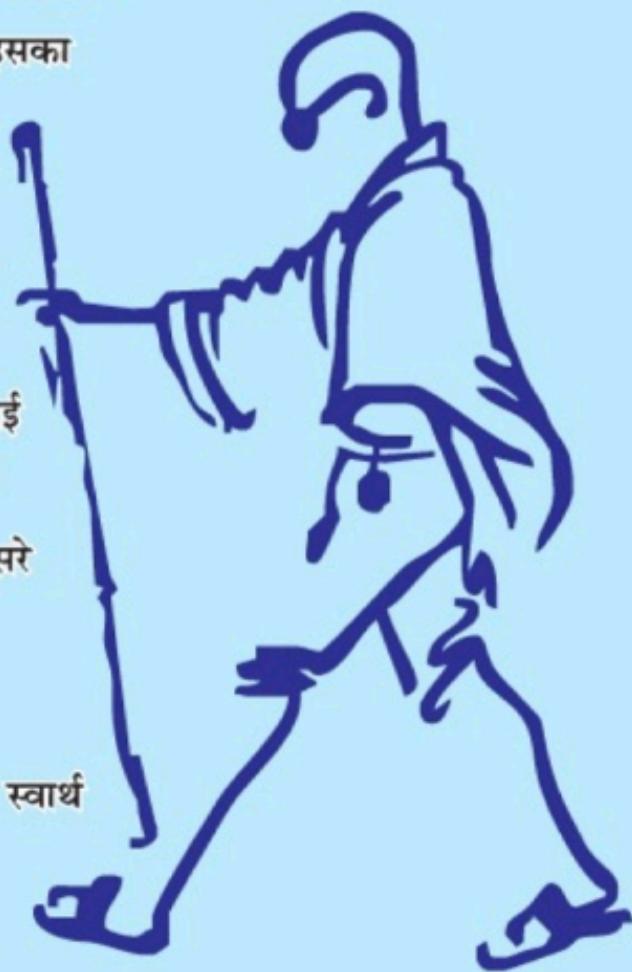
गुरबत में हिन्दू है, दहशत में मुसलमान
आओ इस दौर को 1857 में बदलें।